प्रकाशक :
अ० वा० सहस्रबुद्धे,
मंत्री, अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ,
वर्धा (बंबई राज्य)

०

दूसरी बार : ५,०००
कुल छपी प्रतियाँ : १५,०००
मई, १९५७
मूल्य : पचास नये पैसे

०

मुद्रक :
बलदेवदास,
संसार प्रेस,
काशीपुरा, बनारस

समर्पण

अपने विनोबा-पद-यात्री-दलवाले साथी
भाई-बहनों को उनके प्यार
और सहकार की पावन
और प्रेरक याद में—
सादर समर्पित

दो शब्द

सिर्फ दो सौ साल बाद ही नहीं, बल्कि लगभग दो हजार बरस बाद हिन्दुस्तान के रहनेवालों को अब यह मौका मिला है कि अपने बल पर—स्वतन्त्र शक्ति के साधन से—हम अपने देश की रचना करें। इस वास्ते स्वतन्त्रता का उपयोग करनेवालों की, पहली-दूसरी पीढ़ियों की जिम्मेदारी बहुत गहरी और गम्भीर है। इस समय हम जो कुछ भी करते-कराते हैं, वह इस देश की नयी इमारत में बुनियाद का काम करेगा। अगर इस बुनियाद में कहीं भी कुछ गलती या कमजोरी रह गयी, तो आगे कुल इमारत को ही खतरा है।

आज देश में निर्माण के नाम पर विभिन्न विचार-धाराओं को लेकर तरह-तरह की योजनाएँ सामने आ रही हैं। उनका नतीजा क्या होनेवाला है, इसका तुरन्त तो पता नहीं चल सकता। लेकिन इतना स्पष्ट है कि आँकड़ों के लिहाज से हमारा आर्थिक उत्थान भले ही हो रहा है, सामाजिक और नैतिक दृष्टि से हम उतना नहीं बढ़ पा रहे हैं। गत अक्तूबर में बम्बई और उड़ीसा के सूबों में जो कारनामे हुए, उनसे साफ दीखता है कि हमारे दिल एक-दूसरे से मिलने के बजाय फटते जा रहे हैं। जिस देश में हाथ पैंतीस-चालीस करोड़ जोड़ी हों, वहाँ अगर दिल भी पैंतीस-चालीस करोड़ रहें, तो लेने के देने पड़ जायेंगे। चाहिए तो यह कि हाथ अनेक हों और दिल एक हो। यह सन्देश देनेवाला और इस तरफ सबको ले जानेवाला शायद एक ही कार्यक्रम आज देश के सामने है—भूदान-यज्ञ।

जमीन का बँटवारा तो एक निशानी मात्र है, साध्य नहीं। सारी दुनिया में ही अब धन और धरती बिना बँटे नहीं रह सकती, चाहे भूदान-यज्ञ हो या न हो। पर धन और धरती के बँट जाने के यह माने नहीं कि आपस में प्रेम हो गया, डर निकल गया और एकरस समाज बन गया। जमीन के बँटवाने और चकबन्दी के साथ-साथ दिल बन्दी और दल·

चन्दी भी फैलती गयी, तो अनाज का एक-एक दाना आग के अंगारे से ज्यादा तबाहकुन सिद्ध होगा। भूदान-यज्ञ आरोहण का लक्ष्य यही है कि दिल से दिल मिले, भारत करोड़ों सदस्यवाला एक समरस परिवार बने और निडर होकर शांति की शक्ति के सहारे नम्रतापूर्वक खड़ा हो। दूसरे शब्दों में भूदान-यज्ञ नव-भारत की आधार-शिला है।

इसलिए इस कार्यक्रम मे हर भारतवासी को भाग लेना है, क्योंकि नयी ईंट जमाने मे कौन अपना हाथ लगाना नहीं चाहेगा ? सच तो यह है कि बिना हाथ लगाये रहा ही नहीं जा सकता। यह प्रक्रिया तो सतत जारी है। जाने या अनजाने, सही या गलत, हम सब इसमें अपना-अपना पार्ट अदा कर रहे हैं। पर अगर जान-बूझकर, सोच-समझकर और सही तरीके से हम अपना पार्ट अदा करते हैं, तो जमीन-आसमान का फर्क पड़ जानेवाला है। लेकिन सवाल यह है कि किस तरह हम इसमें हिस्सा लें। आशा है कि इस पर विचार करने में यह छोटी सी किताब हर किसीको मददगार साबित होगी।

अपनी पदयात्रा के दौरान मे संत विनोबा की भेंट हर तरह के लोगों से होती है। वे अपना दिल खोलकर उनके सामने रख देते हैं। चर्चा चलती है। चर्चा क्या, सत्संग ही होता है। इस किताब में ऐसे बारह सत्संगों के संस्मरण दिये गये हैं। इन आपसी संवादों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए मेरा काम केवल 'ट्रांसमीटर' का है। लेकिन 'ट्रांसमीटर' के जैसी निरहंकारी, पारदर्शक और निर्मल क्षमता मुझमे कहाँ ! विनती है कि विज्ञ पाठक अपने मतलब का गूदा इसमें से निकालकर छिलका फेंक देंगे।

पन्दलम (केरल)
१४ अप्रैल १९५६

सुरेश रामभाई

दो शब्द

सिर्फ दो सौ साल बाद ही नहीं, बल्कि लगभग दो हजार बरस बाद हिन्दुस्तान के रहनेवालों को अब यह मौका मिला है कि अपने बल पर—स्वतन्त्र शक्ति के साधन से—हम अपने देश की रचना करें। इस वास्ते स्वतन्त्रता का उपयोग करनेवालों की, पहली-दूसरी पीढ़ियों की जिम्मेदारी बहुत गहरी और गम्भीर है। इस समय हम जो कुछ भी करते-कराते हैं, वह इस देश की नयी इमारत में बुनियाद का काम करेगा। अगर इस बुनियाद में कहीं भी कुछ गलती या कमजोरी रह गयी, तो आगे कुल इमारत को ही खतरा है।

आज देश में निर्माण के नाम पर विभिन्न विचार-धाराओं को लेकर तरह तरह की योजनाएँ सामने आ रही हैं। उनका नतीजा क्या होनेवाला है, इसका तुरन्त तो पता नहीं चल सकता। लेकिन इतना स्पष्ट है कि आँकड़ों के लिहाज से हमारा आर्थिक उत्थान भले ही हो रहा है, सामाजिक और नैतिक दृष्टि से हम उतना नहीं बढ़ पा रहे हैं। गत अक्तूबर में बम्बई और उड़ीसा के सूबों में जो कारनामे हुए, उनसे साफ दीखता है कि हमारे दिल एक-दूसरे से मिलने के बजाय फटते जा रहे हैं। जिस देश में हाथ पेंतीस-चालीस करोड़ जोड़ी हों, वहाँ अगर दिल भी पेंतीस-चालीस करोड़ रहें, तो लेने के देने पड़ जायँगे। चाहिए तो यह कि हाथ अनेक हों और दिल एक हो। यह सन्देश देनेवाला और इस तरफ सबको ले जानेवाला शायद एक ही कार्यक्रम आज देश के सामने है—भूदान-यज्ञ।

जमीन का बँटवारा तो एक निशानी मात्र है, साध्य नहीं। सारी दुनिया में ही अब धन और धरती बिना बँटे नहीं रह सकती, चाहे भूदान-यज्ञ हो या न हो। पर धन और धरती के बँट जाने के यह माने नहीं कि आपस में प्रेम हो गया, डर निकल गया और एकरस समाज बन गया। जमीन के बँटवाने और चकबन्दी के साथ-साथ दिल बन्दी और दल-

बन्दी भी फैलती गयी, तो अनाज का एक-एक दाना आग के अंगारे से ज्यादा तबाहकुन सिद्ध होगा। भूदान-यज्ञ आरोहण का लक्ष्य यही है कि दिल से दिल मिले, भारत करोड़ों सदस्यवाला एक समरस परिवार बने और निडर होकर शांति की शक्ति के सहारे नम्रतापूर्वक खड़ा हो। दूसरे शब्दों में भूदान-यज्ञ नव-भारत की आधार-शिला है।

इसलिए इस कार्यक्रम में हर भारतवासी को भाग लेना है, क्योंकि नयी ईंट जमाने मे कौन अपना हाथ लगाना नहीं चाहेगा? सच तो यह है कि बिना हाथ लगाये रहा ही नहीं जा सकता। यह प्रक्रिया तो सतत जारी है। जाने या अनजाने, सही या गलत, हम सब इसमें अपना-अपना पार्ट अदा कर रहे हैं। पर अगर जान-बूझकर, सोच-समझकर और सही तरीके से हम अपना पार्ट अदा करते हैं, तो जमीन-आसमान का फर्क पड़ जानेवाला है। लेकिन सवाल यह है कि किस तरह हम इसमे हिस्सा लें। आशा है कि इस पर विचार करने में यह छोटी सी किताब हर किसीको मददगार साबित होगी।

अपनी पदयात्रा के दौरान मे संत विनोबा की भेंट हर तरह के लोगों से होती है। वे अपना दिल खोलकर उनके सामने रख देते हैं। चर्चा चलती है। चर्चा क्या, सत्संग ही होता है। इस किताब में ऐसे बारह सत्संगों के संस्मरण दिये गये हैं। इन आपसी संवादों को जन-जन तक पहुँचाने के लिए मेरा काम केवल 'ट्रांसमीटर' का है। लेकिन 'ट्रांसमीटर' के जैसी निरहंकारी, पारदर्शक और निर्मल क्षमता मुझमे कहाँ! विनती है कि विज्ञ पाठक अपने मतलब का गूदा इसमे से निकालकर छिलका फेंक देंगे।

पन्दलम (केरल)
१४ अप्रैल १९५६

सुरेश रामभाई

वाचन और विचार

पाठशालाओं में हम पढ़ते हैं—"वाचन मिथ्या विना विचार।" यह उक्ति शब्दश. सत्य है। हमें किताबें पढ़ने का शौक हो, तो यह अच्छा कहा जायगा। आलस्यवश जो पढ़ता नहीं, वाँचता नहीं, वह अवश्य मूढ़ माना जायगा, पर जो खाली-खाली पढ़ा ही करता है, विचार नहीं करता, वह भी लगभग मूढ़ जैसा ही रहता है। इस पढ़ाई के एवज मे कितने ही आँख खो वैठते हैं, वह अलग है। निरा वाचन एक प्रकार का रोग है।

हममें वहुतेरे निरी पढ़ाई करनेवाले होते हैं। वे पढ़ते हैं, पर गुनते नहीं, विचारते नहीं। फलत. पढ़ी हुई चीज पर अमल वे क्यों करने लगे? इससे हमें चाहिए कि थोडा पढें, उस पर विचार करें और उस पर अमल करें।

—गांधीजी

धन्य धरा सोइ जब सतसंगा।

× × ×

जलचर थलचर नभचर नाना। जे जड़ चेतन जीव जहाना॥
मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि जतन जहाँ जेहि पाई॥
सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ वेद न आन उपाऊ॥

× × ×

बिनु सतसग विवेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई॥
सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला॥
सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई॥

× × ×

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिय तुला इक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥

× × ×

बड़े भाग पाइब सतसंगा। बिनहि प्रयास होंहि भव भंगा॥
संत संग अपवर्ग कर, कामी भव कर पंथ।
कहहिं संत कवि कोविद श्रुति पुरान सद्ग्रंथ॥

× × ×

—तुलसी : रामचरितमानस

अनुक्रम

○

सत्संग

विद्यार्थी : १ :

क्या जन-साधारण की गरीबी को दूर करने के लिए भूदान-यज्ञ पर्याप्त है ?

यह सवाल विद्यार्थियों की एक मंडली ने एक दिन बाबा से किया। अपनी भूदान-यज्ञ-यात्रा के दौरान में विद्यार्थियों की भेंट बाबा से अक्सर होती है। बाबा को उनके सत्संग में बहुत आनन्द आता है, क्योंकि वे अपने को विद्यार्थी ही मानते हैं। विद्यार्थियों के साथ वे समरसता महसूस करते हैं।

विद्यार्थियों ने जब यह सवाल पूछा, तब बाबा मुसकराये और बोले कि आपकी बात से हम सहमत हैं। केवल भूदान से गरीबी का मसला हल नहीं होगा, लेकिन हम यह भी कह देना चाहते हैं कि बिना भूदान के भी यह मसला हल नहीं होगा। भूदान मकान की बुनियाद के जैसा है। इसके आधार पर ही सारी इमारत खड़ी हो सकेगी।

इसके बाद उन भाइयों ने पूछा कि क्या भूदान-यज्ञ से आर्थिक समानता पूरे रूप से और स्थायी तौर से कायम हो सकेगी ?

बाबा बोले कि यह आपका सवाल नहीं है, बल्कि आपने अपना विचार सूचित किया है। इसमें भी हम सहमत हैं कि इससे समानता नहीं आवेगी, पर इसके बिना भी नहीं आवेगी। गाँव-गाँव में जो कच्चा माल होता है, उसका पक्का माल वहीं बनना चाहिए। वह माल वहीं खर्च होना चाहिए। बाहर से सिर्फ वही चीजें आयें, जो गाँववाले न बना सकें। गाँव में तालीम, न्याय, दवा-दारू आदि का अपना इन्तजाम हो। नौकरियों में करीब-करीब

समान तनख्वाह हो। जब यह होगा, तभी आर्थिक समानता हो सकेगी। क्या पटना के टिकट से आप दिल्ली पहुँच पाइयेगा? जब तक गाँव में बाहर का माल आता है और गाँव का कच्चा माल बाहर जाता है, जब तक तनख्वाह या आमदनी में आज की जैसी विषमता है, तब तक आर्थिक समानता नहीं।

शायद उन भाइयों की समझ में यह बात पूरी तरह से नहीं आयी। इस पर उन्होंने सवाल किया कि सम साम्राज्य पर श्रीमान् का विश्वास है?

बाबा हँसने लगे और कहा कि आपके इस प्रश्न का अर्थ क्या है? सम-साम्राज्य से आपका मतलब क्या है?

अगर समता-राज्य पर हमारा विश्वास नहीं है, तो क्या विषमता-राज्य पर है? वह तो आज है ही। तब घूमने की क्या जरूरत? हम जिस समता को चाहते हैं, उसका नाम साम्ययोग है।

जब दुनिया में हिंसा की शक्तियाँ बढ रही हैं, तो अहिंसा से यह कैसे हो सकेगा?

आपका कहना सही है। हमको अहिंसा की शक्ति पैदा करनी होगी। अगर हम भी शस्त्रों से सुसज्जित हो जायँ और शस्त्र शक्ति बढाने में देश की ताकत लगा दें, तो उसका अर्थ यह होगा कि हमको करोड़ों रुपया सेना पर खर्च करना होगा। अमेरिका या रूस के चरणों में बैठकर उनका शिष्यत्व ग्रहण करना होगा। जैसा वे नचायेंगे, वैसा नाचना होगा, दूसरे देशों का आश्रय लेना होगा। इसका अर्थ यह होगा कि हम नाममात्र के स्वतन्त्र हैं, पर वास्तव में हमें पराधीन और गुलाम बनकर रहना होगा। अगर यह सब भयानक मालूम होता हो, तो हमें दूसरी नयी शक्ति, अहिंसा की शक्ति को बढ़ाना होगा।

अहिंसा से आपका स्पष्ट अर्थ क्या है?

अहिंसा का अर्थ आजकल इतना ही किया जाता है कि हिंसा न की जाय। पर इतना ही इसका नकारात्मक अर्थ नहीं है। अहिंसा का एक अर्थ है निर्भय होना। दूसरा है प्रेम और सहयोग करना। तीसरा है रचनात्मक

काम में श्रद्धा रखना। अहिंसा के ये तीन अर्थ हैं—निर्भयता, प्रेमपूर्वक सहयोग और रचनात्मक प्रवृत्ति।

हिंसा को माननेवाले लोग भयभीत रहते हैं। शरीर को कोई मारे-पीटे, तो शरण में आ जाते हैं। शरीर को ही आत्मा समझते हैं। यह तालीम भयभीत बनाती है। जो एक से डरेगा, वह दूसरे को डरायेगा। इधर हिन्दुस्तान के लोग अंग्रेजों से डरते थे, उधर हरिजनों को डराते थे। जैसे बिल्ली चूहे को डराती है, तो कुत्ते से डरती भी है। यह डरना और डराना, दोनों बातें छोड़नी चाहिए। इसीको वेदांत कहते हैं, आत्म-विद्या कहते हैं। यही हमारा भारतीय दर्शन है। हम अपने को शरीर नहीं समझते। ऐसे पचासों शरीर हमने धारण किये हैं और करेंगे। पचासों शरीर छोड़े हैं और छोड़ेंगे। शरीर की हम कोई कीमत नहीं करते। इसको हम कपड़ा समझते हैं। फट गया, तो फेंक दिया। इस देश को हम समझाना चाहते हैं कि हमें निर्भय बनना चाहिए।

यह तो अहिंसा की बात हुई। जब प्रेम और सहयोग की बात कहते हैं, तो उसमें डिमॉक्रेसी या गणतंत्र का क्या स्थान रहे?

बाबा ने कहा कि जिसे हम गणतंत्र कहते हैं, वह गणतंत्र नहीं है, बहुजन-तंत्र है। इसने सारी दुनिया में बहुमत और अल्पमत के दो पक्ष पैदा किये हैं। एक पक्ष का राज्य चलता है, तो दूसरे का विरोध होता है। और दोनों के विरोध से अग्नि निर्माण होती है। अपने देश में भाषा-भेद, प्रान्त-भेद, जाति-भेद, तरह-तरह के भेद हैं ही। इसमें एक भेद और दाखिल हो गया कि मैं अमुक पार्टी का हूँ। पार्टी यानी पार्ट, खंड याने टुकड़ा। लेकिन मैं टुकड़ा नहीं हूँ, अखंड हूँ। पूर्ण हूँ। पूर्णमिदं, पूर्णमदः, पूर्ण हम। हमें ऐसी डिमॉक्रेसी बनानी है, जो सबकी राय से चले। तभी निष्पक्ष तंत्र होगा। पक्षविहीन तंत्र होगा। नहीं तो आप देखेंगे कि हिन्दुस्तान की ताकत इलेक्शन में खतम होती है। मैंने तो एक सूत्र बना लिया है—यत्र यत्र इलेक्शनम् तत्र कार्यं न विद्यते। जहाँ-जहाँ इलेक्शन चलेगा, वहाँ कार्य नहीं

होगा, कार्यनाश होगा। दिल जुड़ेंगे नहीं, टूटेंगे। और हमने क्या कहा है ? 'एषो आर्य, एषो अनार्य, शुचि करो मन !'—भारतवर्ष में, हे आर्य, हे अनार्य, सब आओ। इतनी शर्त होगी कि 'मन शुचि करो', निर्मल करो। यह प्रेम-विचार भारत के महान् ऋषि रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने दिया। उन्होंने यह विचार दिया कि परस्पर सहयोग से रहो, प्रेम से रहो। हम मानव-मानव में कोई भेद निर्माण नहीं करेंगे। तब जो गणतंत्र है, वह गुणतंत्र होगा, सद्गुणतंत्र होगा। सद्गुणों की कीमत की जायगी। सिर्फ गणों की नहीं की जायगी। आज ५१ विरुद्ध ४९, इस तरह प्रस्ताव पास करते हैं। यह है गणतंत्र। हम तो इसको अवगुणतंत्र कहते हैं। ४९ और ५१ मिलकर १०० हो जाते हैं। १०० मिलकर काम करो। पंच बोले परमेश्वर। यह बात सारे हिन्दुस्तान में चलती थी। अब हम कहते हैं कि चार बोले परमेश्वर, तीन बोले परमेश्वर, तीन विरुद्ध दो, तो प्रस्ताव पास। हम उसे प्रस्ताव ही नहीं कहते। पाँचों मिलकर ही प्रस्ताव पास होगा। यह बात हिन्दुस्तान में लानी होगी। तभी प्रेम और सहयोग से गणतंत्र चलेगा। सर्वोदयवादी, लोकशाही सर्वगणतंत्र हमको बनाना होगा। तभी अहिंसा की शक्ति बढेगी।

इस तरह हमें निर्भय बनना होगा। प्रेम और सहयोग के आधार पर सरकार का गठन करना होगा। तीसरी बात हमने यह कही कि रचनात्मक कार्य पर श्रद्धा करनी चाहिए। उनके औजार डिस्ट्रक्टिव या विनाशक हैं, हमारे कन्स्ट्रक्टिव या रचनात्मक हैं। वे जब तलवार लेकर आयेंगे, तब हम उनके सामने वीणा लेकर जायेंगे। वे गुस्से से बात करेंगे, हम प्रेम से। असत्य को सत्य से जीतना होगा। शस्त्र को वीणा से जीतना होगा। विध्वंसक कार्य को रचनात्मक कार्य से जीतना होगा।

अगला प्रश्न विद्यार्थियों ने यह किया कि दर्शन और राजनीति में आपके विचार से क्या अन्तर है ?

बाबा ने कहा कि दर्शन केवल और स्पष्ट होता है। राजनीति केवल वस्तु नहीं, मिली-जुली चीज है। उसमें परिस्थिति और विचारों का मिश्रण होता है।

एक बुरी राजनीति होती है, जो दूसरों का शोषण करती है। उसमें दर्शन नहीं, अदर्शन है। जो अच्छी राजनीति होती है, उसमें भी केवल दर्शन नहीं, अनेक चीजों का मिश्रण है। इसे हम अप्लाइड दर्शन कहेंगे। दर्शन स्वच्छ, शुद्ध और निर्मल होता है। राजनीति इसका व्यावहारिक विनियोग है। साम्ययोग पूर्ण समानता चाहता है। दर्शन एक किनारा है। हम एक किनारे पर हैं। राजनीति पुल के समान है। वह बतायेगी कि कैसे उस दर्शन तक पहुँचा जाय। राजनीति आज की स्थिति और आगे के दर्शन को जोड़नेवाली है। भूदान-यज्ञ की राजनीति को हमने लोकनीति नाम दिया है।

यह सुनकर विद्यार्थियों को बहुत आनन्द-सा लगा। उन्होंने फिर पूछा कि दर्शन प्रत्यक्ष है या परोक्ष? कल्पना और दर्शन में फर्क क्या है? बाबा ने जवाब दिया कि जो साक्षात्, सामने होगा, वही दर्शन है। जो परोक्ष में है, वह अनुमान है। धुँआ देखा, तो अनुमान किया कि आग होगी। कल्पना अनुमान और दर्शन, दोनों से भिन्न है, दोनों से परे है। आज हम सुबह रास्ते में चलते वक्त धवलगिरि पर्वत देखते थे। किसीने कहा कि शंकर भगवान् की कुर्सी है। वे रहते तो कैलाश पर हैं, लेकिन यह स्थान भी उनका हो सकता है। कल्पना यानी जिसे तर्क और दर्शन का पूरा आधार नहीं, पर उनका थोड़ा-थोड़ा आधार लेकर, बहुत ज्यादा श्रद्धा को मिलाकर, कल्पना की जाती है। कल्पना गगन-विहारी है।

प्रार्थना का समय नजदीक आ रहा था। विद्यार्थी ने आखिरी सवाल पूछा कि भूदान-आन्दोलन में हम विद्यार्थी क्या करें?

बाबा ने उनके सामने चार बातें रखीं। पहली चीज यह कि सर्वोदय-साहित्य का खूब अध्ययन करना चाहिए। बापू की आत्म-कथा और मंगल प्रभात, तुलसीकृत रामायण और गीता-प्रवचन जैसे ग्रन्थों का पठन-मनन करें। दूसरा काम उनके करने का यह है कि कुछ-न-कुछ मेहनत रोज करें। उत्पादक शरीर-श्रम उनके जीवन का हिस्सा बन जाना चाहिए। विद्यार्थी चरखा चलायें या कुदाली चलायें, आटा पीसें, लकड़ी चीरें, बर्तन माँजें आदि

परिश्रम का कोई-न कोई काम नित्य करना चाहिए। उन्हें [श्रमनिष्ठ बनना होगा। तीसरी चीज यह है कि जब कुछ समय मिले, तो आसपास के गाँवों मे जाकर वहाँ की स्थिति का अध्ययन करना चाहिए। वहाँ की परिस्थिति को अच्छी तरह से समझना चाहिए। और चौथी बात यह है कि वे नम्र बनें। वाणी सदा नम्र रखें। उद्धत न हों। देहात के खयाल से आप विद्वान् कहलायेंगे, पर देहातवालों के पास हजारों वर्ष का अनुभव पड़ा है। आपको उनके साथ बहुत नम्रता के साथ पेश आना चाहिए। ...

' • चरित्र-शुद्धि ठोस शिक्षा की बुनियाद है। ''

हमारी भाषाओं में 'विद्यार्थी' के लिए दूसरा सुन्दर शब्द 'ब्रह्मचारी' है। विद्यार्थी शब्द तो नया गढ़ा हुआ है। वह 'ब्रह्मचारी' की कुछ भी बराबरी नही कर सकता। मुझे आशा है कि तुम 'ब्रह्मचारी' शब्द का अर्थ पूरी-पूरी तरह समझते होगे। इसका अर्थ है ईश्वर की खोज करनेवाला, ऐसा आचरण करनेवाला कि जिससे जल्दी-से जल्दी ईश्वर के पास पहुँच जाय। दुनिया के सारे बड़े-बड़े धर्मों में चाहे जितने ही भेद हों, परन्तु इस तात्त्विक वस्तु के बारे में सभी एक बात कहते है, और वह यह कि मैला दिल लेकर एक भी स्त्री या पुरुष ईश्वर के सिंहासन के सामने खड़ा नही हो सकेगा, परमधाम को नही पहुँच सकेगा। हमारी सारी विद्वत्ता, वेद-पाठ, संस्कृत, लैटिन और ग्रीक भाषाओं का शुद्ध ज्ञान हमारे हृदयों को प्रकाशित करके पूरी तरह शुद्ध न कर सके, तो वह सब बेकार है। चरित्र की शुद्धि ही सारे ज्ञान का ध्येय होना चाहिए।

—गांधीजी

शिक्षक

: २ :

भूदान-आन्दोलन का लक्ष्य शोषण-रहित, शासन-विहीन समाज कायम करना है। शोषण-रहित तो समझ में आता है, लेकिन शासन-विहीन से आपकी क्या मुराद है? एक कॉलेज के वयोवृद्ध ने शिक्षकों—प्रोफेसरों की सभा में बाबा से सवाल किया।

बाबा ने कहा कि आपका प्रश्न बहुत अच्छा है। शोषण-रहित की बात तो पूँजीवादी व्यवस्था भी कबूल करेगी; इसलिए शोषण-रहित समाज सबको मान्य है। लेकिन हाँ, शासनहीन सर्वमान्य नहीं। हम शासनहीन ही नहीं कहते, शासनमुक्त समाज कहते हैं। यह एकदम से समझ में नहीं आता। दो बातें ध्यान में रखनी चाहिए। समाज का विकास होते-होते कल एक विश्वव्यापी राज्य या वर्ल्ड स्टेट कायम होगी, तब गाँव गाँव का काम कहाँ से चलेगा? मान लीजिये कि वर्ल्ड स्टेट बन गया। उसका केन्द्र कुस्तुन्तुनियाँ, दिल्ली, मास्को, जहाँ भी हो, वहाँ से गाँव-गाँव का काम तो नहीं चलेगा। आज दिल्ली से ही हमारे गाँव गाँव की प्लानिंग होती है। 'वर्ल्ड स्टेट' में यह नहीं हो सकता। शासन मुक्ति का मतलब यह है कि शासन विकेन्द्रित हो। ग्राम-सत्ता-पूर्ण ग्राम-रचना चले। सब तरह का आयोजन, ग्राम के उद्योग, शिक्षा, न्याय आदि सब गाँव में ही चलें। दूसरी बात यह है कि गाँव में जो राज्य चलेगा, उसके निर्णय एकमत से होंगे। चार विरुद्ध एक प्रस्ताव पास, तीन विरुद्ध दो प्रस्ताव पास, यह गलत है। पंच बोले परमेश्वर ही चलेगा। अगर ये दो बातें की जाती हैं—सत्ता विकेन्द्रीकरण

और एकमत से कार्य—तो शासन-मुक्ति की तरफ हम जायँगे। फिर गाँव-गाँव में शिक्षण चलेगा कि समाज कैसे चले? बताया जायगा कि बच्चे माता-पिता के पीछे चलेंगे। शिष्य गुरु के पीछे चलेंगे, मित्र मित्र के पीछे चलेंगे, गाँव ग्राम पचायत के पीछे चलेगा। अनुशासन होगा, शासन नहीं। वेद अनुशासन करता है, शासन नहीं। सलाह देता है, दंड नहीं। हम अनुशासन से नहीं, शासन से मुक्ति चाहते हैं।

इसके बाद एक दूसरे भाई ने पूछा कि आप बेसिक एजुकेशन या नयी तालीम पर जोर देते हैं। लेकिन हमारी समझ में यह नहीं आया कि अपने स्कूलों में आज की हालत मे हम कैसे उसे दाखिल करें?

बाबा ने जवाब दिया कि नयी तालीम नाम की कोई पद्धति है, इतना ही लोग समझते हैं। लेकिन यह बेसिक एजुकेशन तभी चलेगा, जब समाज के बेसिक वैल्यूज, बुनियादी मूल्य बदलेंगे। आज यह चलता है कि हेडमास्टर बड़ा माना जाता है, उसे पाँच सौ रुपया मिलता है, दूसरा शिक्षक छोटा होता है और उसे डेढ सौ रुपया मिलता है। यह भेद बुनियादी तालीम में नहीं चल सकते। बुनियादी तालीम मे मानसिक और शारीरिक श्रम की कीमत लगभग समान होती है। एक बढई को दो रुपये रोज या तीस दिन के काम के साठ रुपये मिलें, लेकिन दूसरों को, बौद्धिक काम करनेवालों को पाँच सौ या हजार रुपये मिलें, ऐसा क्यों? मानसिक परिश्रम का मूल्य शारीरिक परिश्रम से ज्यादा क्यों माना जाय? इसके बाद बाबा ने एक कहानी सुनायी। एक था मल्लाह, दूसरा था गणित का प्रोफेसर। दोनों नौका में जा रहे थे। नौका मॅझधार मे थी। प्रोफेसर ने मल्लाह से पूछा कि तू इतिहास जानता है? मल्लाह ने कहा कि नहीं। प्रोफेसर बोले कि तेरा चार आने जीवन खतम। फिर पूछा कि तू गणित जानता है? उसने कहा, नहीं। तो प्रोफेसर बोले कि तेरा जीवन आठ आने समाप्त। इतने में नदी में बड़ा तूफान आया। मल्लाह ने प्रोफेसर से कहा कि आपको तैरना आता है? उन्होंने कहा कि नहीं। मल्लाह बोला कि तब तो आपका सोलह आने जीवन खतम होता है।

इस पर सब लोग हँस पड़े। कहने का मतलब यह है कि शरीर-परिश्रम और मानसिक परिश्रम के कम-ज्यादा मूल्य की बात गलत है। इतने को बचा लेना शरीर-परिश्रम है। पर उसका मूल्य अपार है। इस वास्ते शरीर-परिश्रम और मानसिक परिश्रम में जो इतना भेद किया जाता है, उसके रहते हुए बुनियादी तालीम नहीं चल सकती। लेकिन एक बात हो सकती है। जैसे बौद्धिक विषय पढ़ाये जाते हैं, वैसे ही शरीर-परिश्रम में प्रोफेसर भी लगें, विद्यार्थी भी लगें और शरीर-परिश्रम का ज्ञान प्राप्त करें। तो आज की तालीम की पूर्ति हो सकेगी, लेकिन वह बुनियादी तालीम न होगी, इसलिए मूल्य बदलने की जरूरत है। बुनियादी तालीम केवल शिक्षण-पद्धति नहीं, जीवन-पद्धति है। आप एक व्रत ले सकते हैं कि बिना शरीर-परिश्रम किये हम नहीं खायेंगे। ऐसा नियम अगर हिंदुस्तान में हो जाय, तो बुनियादी तालीम के लायक वातावरण बनेगा।

इस पर एक दूसरे प्रोफेसर कहने लगे कि क्या यह हो सकेगा? क्या यह सम्भव है? बाबा बोले कि सम्भव वह होता है, जो मनुष्य चाहते हैं। देखिये, ट्रेनें फर-फर दौड़ती हैं, लेकिन बाबा सन् १९५५ में भी पैदल चलता है। ट्रेनें उसे उठाकर अपने में बैठा नहीं लेतीं। एक दफा हम दिल्ली गये थे। शरणार्थियों के बसाने का काम था। सरकार की तरफ से उनको मुफ्त राशन मिलता था। आटा दिया जाता था। हमको खयाल आया कि गेहूँ क्यों नहीं देते? तो कहा गया कि ये लोग गेहूँ नहीं चाहते। मुझे शंका हुई कि शायद दिल्ली में हाथ से आटा पीसने की बात बनती न हो। तो मैंने एक चक्की मँगवायी। बैठ गया उसके पास, उसमें गेहूँ डाला, उसे चलाया। आटा निकल आया। तो १९४८ में दिल्ली में भी चक्की से आटा निकल आया। मैंने आकर शरणार्थी बहनों से पूछा कि चक्की पीसने को तैयार हो या नहीं? सबने हाथ उठा दिया कि हाँ, तैयार हैं। क्यों नहीं राजी होंगे! हमको गंदा आटा खाने को मिलता है। तो मशीन-युग में भी आटा पीसा जा सकता है। यह एक भ्रम फैल गया है कि मशीन-युग है। जैसे पुराने लोग कहते थे

कि कलियुग है, पाप लगा है। जैसे वह कल्पना भ्रान्तिमूलक थी, वैसे ही यह भी भ्रातिमूलक है। कलियुग में तो गाधी और रामकृष्ण हो गये। द्वापर में कंस और दुर्योधन हुए। त्रेता में रावण और कुम्भकर्ण। युग वह, जो आप बनायेंगे। हरएक का अपने-अपने युग का वातावरण होता है। पृथ्वी के इर्द-गिर्द पृथ्वी का वातावरण, मंगल के इर्द-गिर्द मंगल का, शनि के इर्द-गिर्द शनि का। हम कहते हैं कि अपना वातावरण हम बनायेंगे। हम चेतन हैं, जड़ नहीं।

लेकिन जहाँ आज एक मजदूर बारह आने पाता है, वहाँ डॉक्टर एक घटे के ऑपरेशन के हजार-हजार रुपये ले लेता है। तो समता कैसे आयेगी?

बाबा ने बताया कि हमारे एक डॉक्टर मित्र हैं तेलानी (आन्ध्र) मे। वह आँख का ऑपरेशन करते हैं। उस ऑपरेशन के आजकल दो सौ रुपये लिये जाते हैं। वे हमसे सलाह लेने आये। मैंने पूछा कि इसमें आपको कितना श्रम होता है, क्या खर्च पड़ता है? तो तय हुआ कि दस रुपये मे सब निकल जायगा और उनका पेट पालन भी हो जायगा। तो उस डॉक्टर ने उस ऑपरेशन की फीस दस रुपये रख दी। दूसरे डॉक्टर कहने लगे कि तुमने हमारा स्टैण्डर्ड घटा दिया। लेकिन हमारे उस डॉक्टर के पास सैकड़ों लोग आते हैं। धन्धा खूब चलता है, वह सम्पत्तिदान भी देता है। यह कैसे हुआ? एक विचार आया और वह जँच गया।

दूसरी मिसाल लीजिये। एक डॉक्टर हमारे पास आये। पाँच-छह घटे तक हमारी आँख देखी। देखकर चले गये। चश्मा भेज दिया और पचीस रुपये भी भेजे कि जैसे चाहें उपयोग करें, बड़ा उपकार होगा। वही डॉक्टर दूसरे के पास जाता है, तो फीस लेता है। लेकिन हमारे पास से लेने के बजाय हमको दिया। क्यों? समझ गया कि अपरिग्रही मनुष्य है, उसके साथ कैसे व्यवहार करें, तो अपरिग्रह बढ़ना चाहिए। मजदूर आज बारह आने लेता है। वह कहेगा कि मैं प्रेम चाहता हूँ, पैसा नहीं, मुझे खाना समाज दे। पहले बढ़ई को गाँव में घर-घर से अनाज मिलता था और वह घर घर का काम

करता था। कोई हिसाब नहीं रखा जाता था। आज हमने व्याख्यान दिया, तो मुफ्त दिया या बेचा? आपने हमे खाने को दे दिया, हमने व्याख्यान सुना दिया। अगर आप कहे कि इस व्याख्यान के पाँच हजार रुपये ले लो, तो हम लेकर क्या करेंगे? हमे क्या गदहा बनना है? हमारे शरीर को जो चीज चाहिए, वह आपने दे ही दी। इस तरह हर मनुष्य का शरीर चलना चाहिए। डॉक्टर का भी, मरीज का भी, बढ़ई का भी, मजदूर का भी। तो सभी मुफ्त काम करेंगे। यह सब बातें हो सकती है।

प्रकृति मे विभिन्नता तो रहती ही है, समानता तो प्रकृति के विरुद्ध है न?

बाबा हॅसने लगे और कहा कि क्राइस्ट के बारह शिष्य थे। हमारे पास क्राइस्ट की अक्ल का हजारवॉं हिस्सा भी नहीं। लेकिन उन क्राइस्ट के चेलों मे भी एक शकाशील था, एक डाउटिंग टौमस था। तो फिर हमारी क्या हस्ती है? ये बातें करके देखनी होती हैं, कहने से नहीं।

हेड मिस्ट्रेस बहन ने पूछा कि आप जो विचार पर जोर देते हैं, उसका क्या अर्थ है?

बाबा मुसकराये और बोले कि विचार का अर्थ बंगला मे होता है 'झगड़ा'। तभी आपको यह शका हो रही है। जिसे हिन्दी मे विचार कहते हैं, उसे बंगला में चिन्ता-धारा कहते हैं। और हिन्दी में इसका मतलब होता है परेशानी या एंक्जाइटी। मलाबार मे चरखा-कम्पिटीशन को चरखा-मत्सरम् कहा जाता है। अब आप क्या कहियेगा? सब हँस पड़े।

ईसाई कॉलेज के प्रिंसिपल महोदय ने सवाल किया कि अपनी प्रार्थना मे आप बाइबल से भी कुछ दें, तो कैसा रहेगा?

बाबा ने बताया कि बड़े दिन के रोज, २५ दिसम्बर को हमने एक व्याख्यान दिया था। उसमे हमने कहा था कि कुछ शब्दों के साथ कुछ मनुष्यों की आसक्ति का भाव चिपका हुआ है। स्थितप्रज्ञ के लक्षणों मे ऐसी कोई बात नहीं, जो किसी भी धर्मवाले को मान्य न हो। अगर हम

दूसरा श्लोक गीता से लेते, जैसे चातुर्वर्ण्यम्······तो हो सकता था कि खिस्ती धर्मवाले को कबूल न हो। अब आपका सर्मन ऑन दी माउण्ट (गिरि प्रवचन) है। उसकी तालीम ऐसी है, जो सबको कबूल होगी। जब हम शरणार्थियों में मेव लोगों में काम करते थे, तो कुरान से कुछ भाग लेते थे। इसलिए आपकी बात मुझे कबूल है, लेकिन यह भी खयाल होता है कि प्रार्थना में कुछ हिस्सा हिन्दू-धर्म से, कुछ इसलाम से, कुछ खिस्ती से, इस तरह खिचड़ी सी प्रार्थना हो, यह हम नहीं मानते। वहाँ जो भी चले, वैसी वस्तु चुनी जाय— चाहे इसलाम से हो, चाहे हिन्दू धर्म से, चाहे कहीं से–जो सबको मान्य हो। अभी हम पूर्णिया जिले में घूमते थे, तो एक दिन मसजिद में जाकर बोले थे। कुरान से कुछ कहा भी था। हमको इसमें कोई उज्र नहीं। लेकिन यह खिचड़ी पसंद नहीं है। अगर मिश्र समाज हो, कई धर्मों के लोग हों, तो मिली-जुली प्रार्थना चला भी सकते हैं। हमने पवनार में यह कहकर देखा भी है। अलफातेहा का मराठी तरजुमा लिया था। संस्कृत के एक श्लोक का भी मराठी तरजुमा लिया। क्राइस्ट के एक वाक्य का भी मराठी तरजुमा लिया था। कुल की-कुल प्रार्थना मराठी में होती थी। तो मुसलमानों ने कहा कि यह मराठी है, कुरान थोड़े ही है। खिस्ती भी राजी नहीं थे। हिन्दू भी राजी नहीं थे। इस वास्ते हम चाहते हैं कि जो भी चीज हो, वह मातृभाषा में हो और सबको कबूल हो। हमने छः महीने तक इमिटेशन ऑफ क्राइस्ट का पहला हिस्सा आश्रमवालों को सिखाया है। कई महीने धम्मपद पढ़ाया है। इस तरह मौके मौके पर करते हैं। लेकिन रोज की खिचड़ी बनायें और कोई भी उसे चाहे नहीं, यह मुझे अच्छा नहीं लगता।

इसके बाद बाबा कहने लगे कि एक बार हमने गांधीजी से भी इस सम्बन्ध में बातें की हैं। हमने पूछा कि आपकी प्रार्थना में पहले तो जापानियों का चलता है, फिर अरबी का, फिर पारसियों का, फिर कुछ संस्कृत और फिर कुछ बौद्धों का भी। लेकिन हम लोग जो प्रार्थना करने बैठे हैं, उनकी मातृ-

भाषा हिन्दी है या गुजराती या मराठी या बंगला। वे सब इस प्रार्थना की भाषाओं में से कोई भी नहीं जानते। और हमने बापू से पूछा कि क्या परमेश्वर सब भाषाएँ जानता है, और हमारी मातृभाषा ही नहीं जानता? इस पर सब लोग खिलखिलाकर हँस पड़े।

आज देश में जितने शिक्षक हैं, उन सबमे नीरसता आ गयी है। पैसा कम मिलता है, काम चलता नहीं। कुछ शिक्षकों से ज्यादा तनख्वाह तो कहीं-कहीं चपरासी और भंगी पाते हैं। उन्हें यह डर है कि आर्थिक अवस्था उन्नत नहीं होती है, तो कैसे जीयेंगे! समाज मे भी उनके प्रति श्रद्धा नहीं है। तो सोचते हैं कि इट इज वर्थ हाइल हाट वी डू। एक नैराश्य छाया हुआ है। कोई काम ठीक से नहीं कर पाते। तो ऐसी हालत में आपकी क्या सलाह है? हम लोगों को क्या करना चाहिए? यह सवाल बहुत गम्भीर और वयोवृद्ध शिक्षक ने किया।

बाबा यह सुनकर करीब डेढ़ मिनट तक शान्त रहे। फिर बोले कि यह महत्त्व का सवाल है। बात यह है कि यह एक विशस सर्किल है। इसे तोड़ना पड़ेगा। जब शिक्षक लोग जरा सार्वजनिक काम करेंगे और अपना असर जनता पर डालेंगे, तब उनकी प्रतिष्ठा बढ़ेगी। उनकी आवाज भी सुनी जायगी। अगर आप यह कहें कि निराशा आ गयी है, इसलिए काम नहीं होता, तो हम कहेंगे कि काम नहीं होता, इसलिए निराशा आ गयी है। शिक्षक लोगों के पास समय काफी रहता है। छह महीने स्कूल मे पढ़ा देते हैं और छह महीने बचते हैं। अगर वे जरा तकलीफ सहन करेंगे, थोड़ी देर और सार्वजनिक काम मे लगेंगे, तो देश देखेगा कि शिक्षक लोग सारे समाज को अपने अनुकूल बना लेंगे। उसके परिणामस्वरूप शिक्षक का ढाँचा बदलेगा। आज जो ढाँचा चलता है, वह गलत ही है।

आगे चलकर बाबा ने कहा कि मैं आपको एक युक्ति सुझाता हूं। देख लीजिये, बनती है या नहीं। मान लीजिये, किसी स्कूल में दस शिक्षक हैं। हेड-मास्टर को दो सौ रुपये मिलते हैं और सबसे छोटे को पचास रुपये। तो हम

कहेंगे कि आप सारे शिक्षक अपना एक समाज-संघ बनाइये। अपनी कुल तनख्वाह इकट्ठी कर लीजिये और आपके परिवार में जितने लोग हैं, यह देखकर अगर तनख्वाह बाँट लेंगे, तो इस महान् कार्य का असर सारे समाज पर होगा। यह कोई नयी बात मैं आपको नहीं बता रहा हूँ। कई स्कूलों में हुआ भी है। सरकारी स्कूलों में तो नहीं हुआ है, लेकिन जो राष्ट्रीय शाला हम लोगों ने बनायी थी बंगाल में, महाराष्ट्र में, गुजरात आदि में, वहाँ जो पैसा मिलता था—थोड़ा-सा ही मिलता था, लेकिन शिक्षक वह बाँटकर लेते थे। इस तरह अगर आप लोग अपने वेतन को बाँटकर खायेंगे, तो आगे जो हमको साम्ययोगी समाज बनाना है, उसके आप नेता बन जायेंगे। फिर आप लोकमत तैयार करेंगे। लोकमत का असर यह होगा कि समाज में जो कम-बेशी तनख्वाह चलती है, वह भी समान बनाने में मदद मिलेगी। आज तो यह माना जाता है कि जो ऊपर के पदाधिकारी हैं, उनको ज्यादा तनख्वाह देनी चाहिए। प्रधानमंत्री की जितनी तनख्वाह है, उससे ज्यादा राष्ट्रपति को मिलनी चाहिए। लेकिन इसका कारण तो कुछ नहीं है। राष्ट्रपति का काम महत्त्व का है, प्रधानमन्त्री का काम महत्त्व का है, दूसरे मन्त्रियों का काम भी महत्त्व का है। तो वह भेद, जो आज है, उसके लिए सरकार जिम्मेदार नहीं, लोगों में ही यह भेद-भाव चलता है। उसका ही यह परिणाम सरकार पर है। अगर हम नीचेवालों की तनख्वाह बढ़ाते हैं, तो उसके साथ ऊपरवाले की तनख्वाह घटानी होगी। तभी हिन्दुस्तान में काम होगा। क्योंकि हिन्दुस्तान गरीब देश है। इस वास्ते आपने जो बताया कि शिक्षकों की तनख्वाह कम है, तो उसका उपाय यही है कि स्कूल के कुल शिक्षक मिलकर एक साम्ययोगी समाज बनायें।

दूसरी बात, अगर शिक्षक लोग शिक्षा के काम के साथ-साथ दो-तीन घंटे शरीर परिश्रम करने को राजी हो जायँ, तो उन्हें खेती के लिए जमीन भी दी जा सकती है। यह बात मैंने आपके सामने रखी है। फिर भी उसकी आपको बहुत मदद नहीं मिलेगी, क्योंकि आप इस काम के आदी नहीं हैं। इसलिए

मैं आपको सूचना देना चाहता हूँ कि आप जरा घटा-दो-घंटा शरीर-परिश्रम करने की आदत डालिये। उसका बड़ा लाभ होगा और आगे हमें जो स्कूल बनाने होंगे, उनके लिए आप लायक शिक्षक सिद्ध होंगे। कुल मिलाकर हमने आपके सामने जो बातें रखीं, उनको मैं दुहराऊँगा।

एक तो आपको अपनी तनख्वाह इकट्ठी कर साम्ययोगी समाज बनाना चाहिए। दूसरी बात, अपने बचे हुए समय में भूदान या समाज-सेवा के काम करके अपनी योग्यता बढ़ाइये। तीसरी चीज, कुछ-न-कुछ शरीर-परिश्रम का काम—खेती हो या बढ़ईगिरी, कपड़ा-बुनाई या सूत-कताई, चक्की पीसना, बरतन बनाना, सफाई करना, कुछ-न-कुछ करने की आदत डालिये। चौथे, आप राष्ट्र-भाषा सीखिये, ताकि आपका दृष्टिकोण व्यापक बने। उससे योग्यता तो बढ़ेगी ही, शक्ति भी आयेगी। हम समझते हैं कि ये चारों काम आप करेंगे, तो इस नैराश्य से कुछ राहत मिल जायगी। ...

हमारे शिक्षक अपना पुरुषत्व जरूर गँवा बैठे हैं। जो बात वे नहीं करना चाहते, वही वे जबरन् करते हैं। मार-पीटकर उनसे कोई कुछ नहीं कराता, लेकिन सूक्ष्म बलात्कार तो उन पर होता ही है। अपने बड़े अफसरों की धमकियों, तनख्वाह के नुकसान या वेतन न बढ़ सकने की धमकियों या सूचनाओं से शिक्षक घबरा जाते हैं। अब हमारे सामने ऐसा मौका आ खड़ा हुआ है, जब शिक्षक और शिक्षिकाएँ अपनी जान, अपना माल और अपना वेतन, सब कुछ जोखिम में डाल-कर भी जो चीज जैसी है, वैसी ही हिम्मत करके विद्यार्थियों के सामने रख दें। अगर वे ऐसा नहीं कर सकते, तो अपनी आजीविका का साधन उन्हें छोड़ देना चाहिए। इतना अगर आज मैं शिक्षकों को बता दूँ, तो मेरा आज का काम निपट गया।

—गांधीजी

जमींदार : ३ :

जाड़ों के दिन । सहरसा जिला । एक छोटा, लेकिन समृद्ध गाँव । उस गाँव की दो हजार बीघा जमीन में से करीब तीन-चौथाई एक परिवार में और बाकी गाँव के दूसरे लोगों के पास । उस परिवारवालों मे से करीब ६० बीघे का दानपत्र भरा गया । बाबा के आदेश के अनुसार वह दानपत्र उनको वापस कर दिया गया । रात की प्रार्थना के बाद वे लोग बाबा के पास आये । उनमें से एक भाई ग्रेजुएट थे । दूसरे वकील थे । तीसरे कांग्रेस के अच्छे कार्यकर्ता थे । चौथे की प्रजा-समाजवादी पार्टी में बड़ी श्रद्धा थी । उन्होंने एक लिखित पत्र बाबा को दिया, जिसमें कहा कि हमारा दानपत्र वापस करके इस गाँव की जनता का अपमान किया गया है । दूसरे कार्यकर्ता भी मौजूद थे ।

बाबा ने कहा कि सबसे पहले हम आपसे कहना चाहते हैं कि हम किसीकी बदनामी नहीं चाहते । हमें किसीकी आबरू गिरे, यह पसन्द नहीं है । हम ऐसा काम चाहते हैं कि जिसमें प्रेमभाव पैदा हो और दिल से दिल जुड़े ।

वकील भाई बोले कि हम भी यह चाहते हैं । लेकिन हमें दुःख है कि हमारा दानपत्र वापस कर दिया गया, मगर दूसरे के दानपत्र, जो छठे हिस्से से कम के हैं, वे रख लिये गये हैं ।

मेरे यहाँ यह कोई अदालत नहीं है, जहाँ एक-दूसरे की निन्दा की जाय । यह तो प्रेम का सत्संग है, जहाँ हम अपने दिल की बात कहते हैं, अपने-अपने दिल का मैल जाहिर करते हैं । मैं आपके सामने बहुत-सी ऐसी मिसालें पेश कर सकता हूँ, जिन्होंने छठे की तो बात ही क्या, चौथा हिस्सा दिया है, आधा हिस्सा दिया है और बीसियों मिसालें ऐसे लोगों की भी हैं, जिन्होंने सबका सब दे दिया है । आप नीचे गिरानेवाली मिसालों का ही अनुकरण क्यों करें ?

हम तो यही चाहते हैं कि आज जो हमने दिया है, वह कबूल किया जाय, बाकी आगे दिया जायगा।

बाबा बोले, हम चाहते हैं कि आप पहले हमारी बात अच्छी तरह समझ लें। हमारी माँग यह है कि दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि के तौर पर हमें अपने घर मे जगह दीजिये। अगर आप घर मे पाँच भाई हैं, तो हमे छठा हिस्सा दीजिये, तीन हैं, तो चौथा। सात हैं, तो आठवाँ। अकेले हैं, तो बराबर का। लड़के-बच्चों की हम शुमार नहीं करते। क्योंकि लड़के-बच्चे सबको होते ही हैं। यह हमारी धर्म की माँग है।

यह सुनकर वकील साहब जरा खामोश हो गये और कुछ सोचने लगे। ग्रेजुएट बाबू ने कहा कि हमारा खुद का ही काम नहीं चलता, उधर सरकार भी तंग करने जा रही है।

उनकी बात मे जोर देते हुए वकील साहब कहने लगे कि अभी सीलिंग बनने जा रहा है। सीलिंग बनने पर आपको जमीन कौन देगा?

बाबा ने कहा, यह तो हम जानते हैं। आपकी अक्ल भी सरकारी कानून को बेकार बनाने में लगी हुई है। जब हम हैदराबाद की तरफ घूमते थे, तब वहाँ सरकार सीलिंग बनाने की सोचती थी। वह सोचती रही। इस बीच वहाँ के जमींदारों ने अपने लड़के, भाई, भतीजों के नाम जमीनें लिखा दीं। अब वहाँ शायद सौ-सवा सौ एकड़ का कानून बना है। ऐसे कानून का बनना, न बनना बराबर है। आपके बिहार में भी सम्मिलित परिवारों को तोड़ा जा रहा है। घरवाले रिश्तेदारों के नाम से जमीनें लिखा रहे हैं। दो साल बाद या जब भी कानून आवे, तब सब जमीनें बँटी हुई मिलेंगी और तब उस कानून की एक न चलेगी।

तो इसके यह माने हैं कि सरकार कानून फजूल बना रही है?

यह तो आप हमसे ज्यादा बेहतर जानते होंगे। बाबा के यह शब्द सुन-कर सब हँस पड़े। फिर बाबा ने कहा, हमारी माँग की असलियत आप

समझे नहीं। हम तो जमीन की मालकियत ही मिटा देना चाहते हैं। जमीन पर मालिकी का दावा करना गलत है, ईश्वर के कानून के खिलाफ है। यही बात समझाने के लिए हम गाँव-गाँव घूमते हैं। जैसे हवा, पानी और सूरज की रोशनी पर किसीकी मालकियत नहीं, वैसे ही जमीन पर किसीकी मालकियत नहीं रह सकती। अब जमीन उसीके पास रहेगी, जो खुद होकर खेती करेगा। किताब उसीके पास रहेगी, जो पढ़ेगा। हम जानते हैं कि आपमें से सब लोग आज खुद काम करने की हालत में नहीं हैं। हम आपको मुहलत देने को तैयार हैं। ज्यादा नहीं, चार-पाँच बरस की। इस बीच आप अपने लड़कों को तैयार कीजिये, ताकि वह और खटनेवाले मजदूर के लड़के एक साथ मिलकर काम करें। फिर हम आपसे पूछना चाहते हैं कि जब आप वकालत करते हैं, तो जमीन रखकर क्या कीजियेगा?

बाबा की बात को टालते हुए वकील साहब ने कहा कि अभी लोग समझे नहीं हैं।

काग्रेसी भाई कहने लगे कि बाबा, हम देने को राजी भी हों, लेकिन घर के बुजुर्ग कहाँ मानते हैं? अपनी एड़ी चोटी एक करके उन्होंने जमीन हासिल की है। अब उसे कैसे जाने दें?

बाबा बोले, हम इस बात में नहीं पड़ेंगे कि आपके पास जमीनें किस तरह आयीं। हम पिछली बातों में नहीं जाते। उससे न आपको फायदा है, न किसी और को। लेकिन हम आपसे यह जानना चाहेंगे कि जब आपकी प्रादेशिक काग्रेस कमेटी ने ३२ लाख एकड़ के लिए एक प्रस्ताव पास किया, उसे दुहराया, तब आपका क्या फर्ज हो जाता है?

इस पर समाजवादी नौजवान बोले कि यों सर्क्युलर तो आया ही करते हैं।

बाबा ने उनकी तरफ देखकर कहा कि आपके पार्टीवाले तो कहते हैं कि बाबा ने हमारा ही काम उठाया है। तो हम कहते हैं कि हमारे उठाने पर

क्या आपने अपना काम बन्द कर दिया। आप लोग तो बड़े विचित्र हैं। आपके नेता जयप्रकाश बाबू ने इस काम के लिए अपील की। लेकिन आप ऐसे अनुयायी हैं कि अपने नेता की बात भी सुनी-अनसुनी कर देते हैं।

ग्रेजुएट भाई बोले कि बाबा, यह तो होगा ही। क्योंकि आपकी इस माँग से तो पहले अपने पर ही हाथ साफ करना पड़ता है।

हाँ, बाबा ने बड़े जोर से कहा। अगर खुद देना नहीं होता, तो इनको भी कांग्रेस का प्रस्ताव मंजूर था और उनको भी प्रजापार्टी का प्रस्ताव मंजूर था। यही हमारे काम और दूसरे कामों में फर्क है।

वकील साहब ने कहा कि अच्छा, आज तो हमारा दान कबूल कर लीजिये, छठा हिस्सा बाद मे पूरा करेंगे।

जब आप छठा हिस्सा देने को राजी हैं, तो 'शुभस्य शीघ्रम्'। कब दोबारा आपके गाँव मे हमारा आना होगा और कब आपसे भेंट होगी?

यों, वैसे तो जमीन बहुतेरी बेकार पड़ी है। न उसका कोई हिसाब है, न किताब।

वह सबकी सब आप हमें क्यों नहीं दे देते? आपके पास भी बेकार पड़ी है। हमारे काम आ जायगी। हम तो यही कहते हैं कि गैरमजरूआ खास, अपनी कुल-की-कुल दे दीजिये, और जोत के जमीन मे से घर के भाई के नाते हमारा हक दीजिये।

कांग्रेसी भाई बोले कि आप उस परती जमीन को लेकर क्या कीजियेगा? कहीं दरिया है, कहीं रेत है, कहीं कुछ।

आप हमें वह सब दे तो दीजिये। जैसा भी होगा, हम सँभाल लेंगे।

वह तो नये कानून के मुताबिक अपने हाथ से चली जानेवाली है।

जब चली जानेवाली है, तभी आप नहीं देते।

धीमी आवाज से वकील साहब बोले कि उसका मुआवजा……।

बाबा ने कहा, अब आपने अपना दिल खोला। उसके मुआवजे मे रुपया मिलेगा। इसी वजह से उस परती जमीन को भी आप पकड़े हुए हैं।

ऐसा क्यों नहीं करते कि गैरमजरूश्रा खास का जो मुश्रावजा श्रापको मिले, वह हमें दे दीजिये। ऐसा कई श्रीमानों ने किया भी है।

काग्रेसी सज्जन बोले कि वह तो बड़े श्रादमी हैं। न हमारी उतनी हस्ती है श्रौर न घरवालों की ही इजाजत है।

यह श्राप जानिये। लेकिन गैरमजरूश्रा खास अगर आप दे देते हैं, तो इसमें श्रापका कोई ज्यादा नुकसान नहीं होता।

इसके बाद थोड़ी देर तक सभी चुप रहे। वे लोग श्रापस में कुछ सलाह-सी करने लगे। एक भाई बोले कि बाबा, हम तीनों श्रपने-श्रपने हिस्से का छठा हिस्सा देने को राजी हैं।

बाबा इस पर हँसे श्रौर कहा, आपका कौनसा गणित है? पटना युनिवर्सिटी या बिहार युनिवर्सिटी का? यह सुनकर सबको श्रचरज हुश्रा श्रौर उनमें से एक ने पूछा कि ये दोनों गणित कौन-कौनसे हैं?

बाबा ने बताया कि पटना युनिवर्सिटी के पढे हुए एक वकील साहब हमें एक जगह मिले। उन्होंने हमें एक बीघा जमीन दान में दी श्रौर कहा कि यह छठे हिस्से से ज्यादा होती है। हमने उनसे पूछा कि यह कैसे? तो कहने लगे कि हमारे घर में कुल १०० बीघा जमीन है। हम श्रपने पिताजी के चार लड़के हैं। हमारे पिताजी श्रभी जीवित हैं। तो हरएक के हिस्से में २० बीघा पड़ा। श्रब हमारे खुद के तीन लड़के हैं। एक हम श्रौर तीन वे। इस तरह हमारे हिस्से के भी चार हिस्से हो गये। हमारे पल्ले पाँच बीघा ही जमीन पड़ी। उसमें का छठा हिस्सा न देकर कुछ ज्यादा ही दिया।

यह सुनकर सभी लोग हँस पड़े।

बाबा बोले कि यह है श्रापके पटना युनिवर्सिटी का गणित। सौ बीघे का छठा हिस्सा एक बीघा। तो बताइये कि श्राप हमें किस हिसाब से दे रहे हैं?

एक भाई बोले कि बिहार युनिवर्सिटीवाला गणित तो बताया ही नहीं?

कांग्रेसी महोदय कहने लगे कि बाबा के मुख से अब क्या क्या सुनना चाहते हो? जो देना हो, दो।

वकील साहब ने कहा कि हमारे लड़कों और हमारे हिस्से की जो जमीन है, उसमें से कुल का छठा हिस्सा आपको देंगे। हम तीनों भाई, जो एक ही खानदान के हैं, अलग-अलग देंगे।

बाबा ने मुसकराते हुए कहा कि हमें तो कुल परिवार का कम-से-कम छठा हिस्सा चाहिए। लेकिन आपने यह बिहार युनिवर्सिटी का गणित लगा ही लिया। बाकी परिवार का छठा हिस्सा हमें कब मिलेगा?

कांग्रेसी भाई ने जवाब दिया कि वह तो बाबूजी, चाचाजी सलाह करेंगे, सब घर के लोग बैठेंगे और तब जैसी राय होगी, वैसा किया जायगा। इस वक्त तो हमने अपने हिस्से का छठा हिस्सा दिया है।

अच्छी बात है, बाबा ने कहा। हम उम्मीद करेंगे कि जब आपने छठा हिस्सा दिया है, तो अपने बड़े-बूढ़ों से बात करके कुल परिवार का छठा हिस्सा तो जरूर दिलायेंगे। लेकिन यह इस वक्त जो आप जमीन दे रहे हैं, वह सब जोतवाली है न?

समाजवादी नौजवान ने कहा कि अब तो हमने आपको अपना भाई मानकर आपका हक दिया है। जब हक मिलता है, तब तो अच्छी-बुरी, सब तरह की चीज लेनी होगी।

बाबा मुसकराये और कहने लगे कि चलिये, आपने हमें घर में जगह तो दी। आपने हमारा हक तो मजूर किया। लेकिन हम इन्साफ चाहते हैं। आप यह तो देखिये कि जिस गरीब भाई को जमीन देते हैं, उसको भी आपकी ही तरह अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। तो जमीन के अलावा घर की दूसरी चीजों में से भी उसे हिस्सा मिलना चाहिए। हम आपके सबसे कमजोर और सबसे छोटे भाई हैं। छोटे भाई का दावा तो और भी ज्यादा होता है।

यह सुनकर कांग्रेसी भाई कुछ हैरान से नजर आये। कहने लगे कि बाबा, आप तो धीरे धीरे आगे ही बढ़ते जाते हैं।

आप ही बताइये कि हम क्या कोई अन्याय की बात कह रहे हैं ? आपको क्या यह बरदाश्त होगा कि आप अच्छी तरह खाते-पीते हों और आपका भाई गयी-गुजरी हालत में रहे ! हम कम-से-कम यह तो जरूर उम्मीद करेंगे कि आप जो हमें परती जमीन देते हैं, वह एक बार तुड़वाकर देंगे।

बाबा की यह माँग उन भाइयों ने मंजूर की।

इस तरह करीब सवा घंटे तक यह सत्संग रहा और हक के तौर पर बाबा को छठा हिस्सा जमीन दी गयी। •••

व्यापारी

: ४ :

"आप जमींदारों से या भूमिवालों से तो भूमि माँगते हैं; लेकिन क्या हमारे लिए भी आपके पास कोई कार्यक्रम है ? आज की परिस्थिति में हमारा क्या धर्म है ?" एक नौजवान ने व्यापारियों की एक सभा में बाबा से पूछा।

बाबा ने कहा कि हाँ, है। जमीन का बुनियादी सवाल है। इसलिए साल-डेढ़ साल तक हमने उसी पर जोर दिया। फिर हमने सम्पत्तिदान-यज्ञ की बात शुरू कर दी। उसका आशय यह है कि जो खाता है, वह खिलाये भी। सौ रुपये में से चार आने, आठ आने का दान कर देना हम धर्म नहीं समझते। हम चाहते हैं कि आप कर्तव्य-बुद्धि से, समझ से दान दें। आज हिन्दुस्तान में व्यापारी के लिए कोई प्रतिष्ठा नहीं है, निन्दा-ही-निन्दा है। शास्त्र में कहा गया है कि जैसे खेती धर्म है, वैसे ही व्यापार भी धर्म है। धर्म के माने यह तो नहीं हो सकते कि लोगों को दुःख में देखते हुए हम आनन्द में रहें। जब भगवान् कृष्ण ने व्यापार को धर्म माना है, तो उसके साथ सेवा, त्याग आदि भी बताया है।

आगे चलकर बाबा ने कहा कि आज व्यापारियों की तरफ लोग किस निगाह से देखते हैं ? मारवाड़ी, बोहरा आदि किसीके लिए भी जनता में आदर की भावना है ? दुर्दैव है कि जो इतना बड़ा काम करता था, वह निंदित हो। एक जमाने में व्यापारी को महाजन कहा जाता था। लोग अपने जीवनभर की कमाई व्यापारी के पास रखकर तीर्थ करने चले जाते थे। लौटकर फिर ले लेते थे। व्यापारी यानी संरक्षक। उनके प्रति श्रद्धा थी लोगों में। आज अविश्वास है। इसका कोई कारण होना चाहिए।

ऐसा तो नहीं हो सकता कि वे धर्म पर चलते हुए भी निन्दित हों। कारण यह है कि पैसे का महत्त्व बढ गया है, मानव का घट गया है। इसलिए व्याज पर व्याज चला है। नहीं तो यह कैसे हो सकता था कि लगभग सात हजार मील दूर के व्यापारी आकर उनका व्यापार खतम कर दें, अपना व्यापार चलायें, अपना राज चलायें। आज भी सच्चे अर्थ में हिन्दुस्तान में व्यापारी बहुत कम हैं, दलाल हैं। जो निन्दा है, उसके पीछे पाप है।

इसके बाद बाबा ने कहा कि हम व्यापारी को प्रतिष्ठा दिलाना चाहते हैं। हिन्दुस्तान के व्यापारी-वर्ग ने हमेशा मदद की है, उसमें दयालुता भी है। धर्म, तीर्थ-यात्रा, श्राद्ध आदि फजूल कार्य में वे बहुत खर्च कर डालते हैं। लेकिन उस दया दान से समाज आगे नहीं बढता। धर्म तो नित्य होना चाहिए, सतत चलना चाहिए। हम आपकी कमाई के बीच नहीं पड़ते। जो है सो है। लेकिन घर का जो खर्च चलता है—खाना-पीना, कपड़ा-लत्ता, बच्चों की तालीम, दवा-दारू, मुसाफिरी, शादी-गमी आदि—उसका एक हिस्सा हमें दीजिये। हमें अपने परिवार का एक अंग समझिये।

आज जगह जगह जमीन का बँटवारा हो रहा है। जमीन के अलावा किसानों को बीज देना है, बैल देना है, पानी का इन्तजाम करना है। उन्हें जमीन पर खड़ा करना है। इसलिए सम्पत्तिदान की बहुत जरूरत है। आप जो हमें देंगे, उसे भी अपने पास ही रखेंगे। लेकिन खर्च करेंगे हमारे निर्देश के अनुसार। हम मुक्त हैं। जिस क्षण ईश्वर बुलायेगा, उसी क्षण तैयार। किसीको हम झमेले में नहीं डालते। इसलिए अपना घर जो चलाते हैं, वह समझें कि घर में एक और है। अगर पाँच हैं तो छठा, चार हैं तो पाँचवाँ। यह जिन्दगीभर देने का काम है। इतनी हमारी माँग है। आप समझदार लोग हैं। समझ-बूझकर काम करते हैं। हम चाहते हैं कि आप इस पर विचार करें और जो ठीक जँचे, वह करें।

कुछ झिझकते हुए, नीची निगाह किये, एक वयोवृद्ध भाई ने पूछा कि एक तो इन्कमटैक्स सरकार का है ही। अब यह आपका एक टैक्स और चला!

बाबा ने जवाब दिया कि अगर आपका लड़का टैक्स है, तो यह भी टैक्स है। हम तो यही कहते हैं कि जो आप खायें, उसमें से हमें भी खिलायें। ज्यादा खाते हैं तो ज्यादा दें, कम खाते हैं तो कम। अगर माँ-बाप, बाल-बच्चे टैक्स हैं, तो विनोबा भी टैक्स है।

पलभर रुककर बाबा ने कहा कि आपके घर के सुख दुःख में हम पूरे शरीक हैं। बावजूद तकलीफ के अपना कुटुम्ब आप चलाते हैं। हमें उस कुटुम्ब का ही एक समझिये।

यह सुनकर एक दूसरे सज्जन कहने लगे कि घर का आदमी होता है तो खटता है, लेकिन आपको तो खिलाना-ही-खिलाना है।

इस पर बाबा हँसे और खुशी जाहिर की कि आपने बहुत अच्छा सवाल पूछा। लेकिन आप जरा विचार करें कि घर का लड़का होता है, तो उसकी खातिर नुकसान भी उठाना पड़ता है। वह बरबादी भी करता है। लेकिन विनोबा को आप घर का मनुष्य समझते हैं, तो इज्जत बढ़ती है कि नहीं? घर का स्तर ऊँचा उठता है कि नहीं? जितना काम आपका लड़का करेगा, उससे ज्यादा विनोबा करेगा।

थोड़ी देर बाद एक भाई बोले कि व्यापार की हालत इतनी खराब है कि कहा नहीं जा सकता।

बाबा ने कहा कि जमीनवाले की हालत तो और भी ज्यादा खराब है। जब धर्म उठेगा, तो उसका असर सारे समाज पर होगा। एक बात याद रखिये—जो दे, सो खुशी से दे और जो न दे, उसकी निन्दा न हो। किसीको आज देने की प्रेरणा नहीं होती, तो उसे छोड़ दें। मत्सर पैदा न हो। शुद्ध प्रेम के सिवा कोई और वस्तु नहीं। हम मानते हैं कि हमारा पैसा हर घर में जमा है। पैसा कमानेवाले आप, खर्च करनेवाले आप। हिसाब रखने-

वाले आप। उस खर्च के लिए निर्देश हमारा लेना होगा। भूदान समिति की मारफत बतायेंगे। साल के आखिर में हिसाब भेज दीजिये। यही सच्चे धर्म का काम है।

इसके बाद बाबा ने बताया कि किसीने दान पत्र तो लिख दिया, मगर खर्च नहीं करता है, तो उसको परमेश्वर देखेगा। हम आपका दान-पत्र फाड़ डालेंगे। यह केवल आप और आपके ईश्वर के बीच सम्बन्ध है।

इस स्पष्टीकरण से सबके चेहरे पर प्रसन्नता-सी छा गयी। एक नौजवान भाई ने पूछा, आपने कहा कि हमें परिवार का हिस्सा समझो। तो आज जब घर में हम पाँच हैं, तब आप छठा हिस्सा माँगते हैं, दो-तीन बरस बाद आठ हो जायँ, तब भी छठा ही लीजियेगा ?

बाबा ने तुरन्त जवाब दिया—नहीं। तब हम आपके घर के नवें भाई हो जायेंगे और नवें का हक माँगेंगे।

इस पर एक उत्साह की लहर सी दौड़ गयी।

एक भाई ने यह सवाल किया—क्या जनसंख्या की अधिकता हालत खराब होने के लिए जिम्मेदार नहीं है ?

बाबा—हम नहीं समझते। पुरुषार्थहीनता और निष्क्रियता जिम्मेवार हैं।

इसके बाद एक भाई ने यह शंका रखी—आप कहते हैं, खर्च में से दो। आमदनी में से माँगना चाहिए। क्योंकि कहीं-कहीं तो सम्पत्ति है ज्यादा, और खर्च है कम।

बाबा ने पूछा कि वह सम्पत्ति कहाँ है ? बैंक में है न ?

तरुण ने जवाब में कहा—जी, हाँ।

बाबा—तो फिर कहीं-न-कहीं तो खर्च होगी ही। कोई न-कोई तो उसको खर्च करेगा। वहाँ जायेंगे। बस, जाना पड़ेगा सबके घर।

एक दूसरे भाई पूछने लगे कि आप भूमिवान् से भूमि भी माँगते हैं और सम्पत्तिदान भी ?

बाबा—तो ज्यादा धर्म करने से नर्क में चले जाने का डर है क्या ?

यह सुनकर सब हँस पड़े। बाबा ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, जमीन की मालिकी छोड़ना तो बुनियादी काम है। जमीन उत्पादन का साधन है। भूमिवानों को तो दूना धर्म है। उसी तरह आप व्यापारी भाइयों के लिए भी एक और धर्म है। वह यह कि आपका व्यापार सचाई से चले। यह धर्म भी लागू होगा। पहले एक दफा आपके घर में हमें जगह तो मिले।

सवाल—तो क्या शराबी से भी आप सम्पत्तिदान लेंगे ?

बाबा—ठीक सवाल है। उससे कहेंगे कि शराब बन्द करो। लेकिन अभी तो यह कहेंगे कि पहले यह धर्म कबूल करो। वह मुझको ठगेगा नहीं। मेरी दाढ़ी देखकर ही डर जायगा। ...

साहित्यिक : ५ :

आत्मा का जो सतत सहवास करे, उसके 'सहित' रहे, वही साहित्यिक कहलाता है। इसी वजह से साहित्यिक को सदा से ऊँची-से-ऊँची प्रतिष्ठा दी गयी है। रामचरितमानस के आरम्भ में ही गोस्वामी तुलसीदास ने राम-सीता के पीछे ही कवीश्वर वाल्मीकि की वन्दना की है और कवीश्वर हनुमान् की उनके बाद में। साहित्यिक की शक्ति का भी कोई ओर-छोर नहीं है। क्रान्तिकारकों का निर्माण वही करता है। जो काम ब्रह्मा भी न कर सकें, उसको करने की क्षमता साहित्यिक में है। साहित्यिक का जितना गौरव गाया जाय, थोड़ा है।

हर युग की पहचान उसके साहित्यिकों और साहित्य से ही की जाती है। अंग्रेजी राज के जमाने के बाद हिन्दुस्तान ने जिस तरह विचार-शोधन किया और करवटें लेकर खड़ा हो गया और फिर अंग्रेजी राज को आखिर उजाड़ ही डाला, इसकी पूरी तसवीर पिछले डेढ़-दो सौ बरस के भारतीय साहित्य में मिलती है। पर जमाना तेजी से बदलता है, विज्ञान के युग में तो और भी तेजी के साथ। उसीके अनुसार साहित्य और उसके साथ कला-विज्ञान आदि की भी दिशा बदलती है। वह नया-नया मार्ग-दर्शन समाज का करता है।

इधर कई बरसों से भूदान यज्ञ-आन्दोलन ने एक विचार-क्रान्ति देशभर में मचा दी है। उसका प्रत्यक्ष असर परिस्थिति और समाज पर भी पड़ रहा है। हमारे साहित्यिकों को भी उसके आवाहन की गम्भीरता और गहराई का भान होता जा रहा है। पर उसने अभी नुमायाँ सूरत नहीं पकड़ी है। इससे कभी-कभी कुछ लोगों को शिकायत होती है

कि साहित्यिकों ने अभी भूदान या सर्वोदय की तरफ ध्यान नहीं दिया। हम ऐसा नहीं मानते, क्योंकि साहित्य पर 'चट मॅगनी पट व्याह' का हिसाब लागू नहीं होता। पर जब भोले भाई-बहन शिकायत करते हैं, तो साहित्यिकों को चिढ पैदा होती है। ठीक भी है। क्योंकि वे खूब जानते हैं कि उन्हें क्या करना है, क्या नहीं। इससे लोगों को और भी मजा आता है। जितना साहित्यिक रूठते हैं, उतना ही वे उन्हें और छेड़ते हैं। पर अपने नम्र स्वभाव के कारण साहित्यिक इसे झेल लेते हैं, अपने गम को पी जाते हैं।

खुशी की बात है कि अपने इस गम का इजहार हिन्दी के एक सुप्रसिद्ध साहित्यिक श्री रामवृक्ष बेनीपुरी ने और कहीं न करके संत विनोबा के ही सामने किया। गत पुरी-सम्मेलन में उन्होंने एक दिन उनसे कहा कि 'बाबा! क्या यह जरूरी है कि किसी कविता या लेखादि में पचास मरतबा भूदान या सर्वोदय का नाम आये, तभी वह आन्दोलन की सेवा मानी जायगी!' दूसरे और भी साहित्यिक मौजूद थे। पत्रकार भी थे कुछ।

बेनीपुरीजी के बाद महाराष्ट्र के सरनाम साहित्य-सेवी श्री श्रीपाद जोशी पूछ बैठे कि आखिर आप हम लोगों से क्या उम्मीद करते हैं, हम क्या करें!

बाबा यह सुनकर मुसकरा दिये। फिर जरा तनकर बैठ गये और उनके मुँह से मानो सरस्वती प्रकट हुई। उन्होंने तुकाराम के एक वचन का हवाला देकर साहित्यिकों का अभिनन्दन किया। तुकाराम ने कहा है—हे परमेश्वर! तेरे नाम की महिमा तू नहीं जानता, हम जानते हैं। उसी तरह साहित्यिक अपनी महिमा नहीं जानते। बाबा बोले कि अनेक भाषाओं के साहित्य का रस चखने का जो मुझे मौका मिला है, उससे मुझे साहित्य की महिमा का भान हुआ है।

इसके बाद वे बोले कि मैं अपने मन में जब साहित्य की व्याख्या करने जाता हूँ—व्याख्या करने का मुझे शौक भी है—तब उसकी व्याख्या करता हूँ: साहित्य यानी अहिंसा। अब यह सुनकर लोग कहेंगे कि यह तो खब्ती है,

हर जगह अहिंसा लाता है। परन्तु साहित्यकारों ने भी उसकी व्याख्या की है कि सर्वोत्तम साहित्य सूचक होता है। सूचक साहित्य को सर्वोत्तम क्यों माना जाता है? इसलिए कि वह सुननेवालों पर आक्रमण नहीं करता। किसी पर अगर उपदेश का प्रहार होने लगा, तो यद्यपि वह उपदेश हितकर हो, फिर भी उसका स्पर्श शीतल नहीं होता। अभी बेनीपुरीजी ने कहा कि 'भूदान-यज्ञ' शब्द किसके साहित्य में कितनी दफा आया, इस पर वे लोग हिसाब लगाते हैं कि यह साहित्य भूदान-यज्ञ का सहायक है या नहीं। इसके साहित्य में 'भूदान' शब्द पचास बार आया, उसके साहित्य में पाँच सौ बार आया, ऐसी सूची बनाते हैं और गिनती करते हैं।

उत्तम कृति का लक्षण यही है कि जैसे रामचन्द्र को देखने पर अनेक लोगों ने अनेक कल्पनाएँ अपनी अपनी भावना के अनुसार कीं, वैसे ही जिस बोध से अनेकविध तात्पर्य निकलते हैं, वही साहित्य-बोध है। कानून की किताब में इससे बिल्कुल उल्टी बात होती है—एक वाक्य में से एक ही अर्थ निकलना चाहिए, दूसरा नहीं निकलना चाहिए। अगर एक वाक्य से दो अर्थ निकले, तो वकीलों की कमबख्ती आ जाती है। साहित्य की प्रकृति इसके विरुद्ध होती है। गीता उत्तम साहित्य है, रामायण उत्तम साहित्य है, क्योंकि उनके तात्पर्य के विषय में मतभेद है। जिस साहित्य के तात्पर्य के विषय में मतभेद न हो और तात्पर्य निश्चित कहा जा सके, उसमें साहित्य-शक्ति कम प्रकट होती है।

वाल्मीकि-रामायण जब हम पढ़ते हैं, तो उसमें बहुत ज्यादा उपदेश के वचन नहीं आते। गंगा बहती जाती है। मनुष्य उसके साथ-साथ बहता जाता है। अनेक मनुष्यों को अनेकविध तात्पर्य हासिल होते हैं और एक ही मनुष्य को समयानुसार अनेकविध तात्पर्य हासिल होते हैं। साहित्य की विशेषता इस विविधता में है। इसलिए जब हम साहित्यिकों से कुछ अपेक्षा रखते हैं, तो इसका मतलब यह नहीं कि वे अपनी विशेषताओं को

छोड़कर हमारा काम करें, उनकी विशेषता यही है कि साहित्य से विविध बोध मिलते हैं।

आगे चलकर बाबा ने कहा कि ईश्वर के प्रेम के बारे मे भक्त-जन कहते हैं कि वह प्रेम अहेतुक होता है, उसमे हेतु नहीं होता। प्रेम करना ईश्वर का स्वभाव है। वैसे साहित्य में भी कोई हेतु नहीं होता। साहित्य स्वयभू वस्तु है, लेकिन हेतु रखने से जो नहीं सध सकता, वह साहित्य मे बिना हेतु रखकर सधता है। यह साहित्य की खूबी है। गीता भी मुझे इसीलिए प्यारी है कि वह हेतु न रखना सिखाती है। वह एक ऐसा ग्रन्थ है, जो यहाँ तक कहने का साहस करता है कि निष्फल कार्य करो। निष्फल कार्य की प्रेरणा देनेवाला ऐसा दूसरा ग्रन्थ दुनिया मे नहीं देखा। साथ-ही-साथ वह (गीता) जानती है कि जिसने फल की आशा छोड़ी, उसे अनन्त फल हासिल होता है। वाल्मीकि-रामायण के आरम्भ की ऐसी ही कहानी है: शोकः श्लोकत्वमागतः। यत्क्रौंचमिथुनादेकम्—क्रौंच मिथुन का वियोग वाल्मीकि को सहन न हुआ, शोक हुआ और वाणी से सहज ही श्लोक निकल पड़ा। उसे मालूम भी न था कि उसका शोक श्लोकाकार बना। बाद मे नारद ने आकर कहा कि "तेरे मुँह से यह श्लोक निकला है। इसी अनुष्टुप् छन्द मे रामायण गाओ।" फिर सारी रामायण अनुष्टुप् छन्द मे गायी गयी। सहानुभूति की प्रेरणा से काव्य पैदा हुआ और शोक का श्लोक बना।

साहित्य की व्याख्या करते हुए बाबा बोले कि मैंने साहित्य की जो व्याख्या की, उसमे भी यही विशेषता है। साहित्य में ऐसी शक्ति है कि उससे श्रम का शम बन जाता है। बिना श्रम के कोई भी महत्त्व की चीज नहीं बनती, लेकिन साहित्य में श्रम को शम का रूप आता है, दूसरी चीजों में मनुष्य को आराम की भी आवश्यकता होती है। वहाँ श्रम और आराम परस्परविरोधी होते हैं। मनुष्य श्रम से थकता है, तो आराम लेता है। और जब आराम से थकता है—आराम की भी थकान होती है—तो फिर श्रम करने लगता है। लेकिन साहित्य की यह खूबी है कि उसमे श्रम के

साथ-साथ श्रम चलता है। चौबीसों घंटे काम और चौबीसों घण्टे आराम—यह है साहित्य की खूबी। साहित्य का चित्त पर कोई बोझ नहीं होता।

साहित्य की सर्वोत्तम संज्ञा, उसका सर्वोत्तम संकेत मुझे आकाश में दीखता है। आकाश-दर्शन की किसीको कभी थकान नहीं होती। खुला आसमान निरन्तर आपकी आँख के सामने होता है, फिर भी आँख थक गयी, ऐसा कभी मालूम नहीं होता। आकाश के समान व्यापक, अविरोधी और गति देनेवाला होता है साहित्य। फिर भी ठोस, भरा हुआ। यह भी आकाश का ही वर्णन है। ऐसी कोई जगह नहीं है, जहाँ आकाश न हो। जहाँ कोई ठोस वस्तु नहीं है, वहाँ भी आकाश है और जहाँ ठोस वस्तु है, वहाँ भी आकाश है। ठोस वस्तु नापने का वही मापक है। ट्रेन में जब हम बैठने जाते हैं, तो भीतर के पैसेन्जर कहते हैं कि यहाँ जगह नहीं है। इसका मतलब यह होता है कि यहाँ जगह तो है, परन्तु वह व्यापक है। तो आकाश ऐसी व्यापक वस्तु है, जहाँ कोई चीज नहीं है, वहाँ भी वह है, जहाँ कोई चीज है, वहाँ भी वह है। साहित्य का स्वरूप भी आकाश के जैसा ही व्यापक है। इसलिए आकाश ही साहित्य की सर्वोत्तम संज्ञा है।

साहित्य की एक व्याख्या यह है कि उसका हमेशा अनुकूल ही परिणाम होता है। यह तो तब बन सकता है, जब प्रतिक्षण नया अर्थ देने की क्षमता हो। जिसको दूध प्रिय है, उसे गाय प्रिय होती है। बिना दूध की गाय प्रिय नहीं होती। जिसे दूध प्रिय नहीं, उसे दूध देनेवाली गाय भी प्रिय नहीं होती। लेकिन ऐसी कोई कामधेनु हो, जो हर चीज देती हो, तो वह सबको सदा सर्वदा प्रिय होती है। साहित्य ऐसी कामधेनु है कि उसमें से अपनी इच्छा के अनुसार बहुत कुछ मिल जाता है।

उत्तम साहित्यिक के शब्द स्वल्पाक्षर होते हैं। बहुत पानी डालकर फैलाये हुए नहीं होते। स्वल्पाक्षर होते हैं, याने थोड़े में अधिक सूचकता होती है। और उनमें अनाक्रमणशीलता होती है, जिससे सहज ही बोध मिले। व्यक्ति बोध लेना चाहे, तो ले सकता है। और न लेना चाहे, तो

नहीं भी ले सकता। हर वक्त बोध लेना पड़े, तो मुश्किल होगी, इसलिए जब बोध लेना चाहे, तभी ले सकता है। समयानुकूल बोध मिले और बोध न भी मिले, तो भी जो प्रिय हो, वही अच्छा साहित्य है।

इसके बाद बाबा की मुद्रा और गम्भीर हो गयी। एकाध मिनट वे चुप रहे और फिर कहने लगे कि एक दफा मैं बहुत बीमार था। कभी-कभी रामजी का नाम लेता था, कभी माँ का। मेरी माँ तो उस समय जिन्दा थी नहीं। मैं मन मे सोचने लगा कि उस माँ का मुझे क्या उपयोग है, जो जिन्दा नहीं है और मुझे कितनी भी तकलीफ क्यों न हो, उसे मिटाने के लिए वह नहीं आ सकती। फिर भी मैंने उस शब्द का उपयोग किया। माँ के मरने पर भी 'माँ' शब्द के उच्चारण से उसके पुत्र को बीमारी मे प्रसन्नता होती है। उस शब्द से ही उसे अपना अभीष्ट प्राप्त हो जाता है। यह ऐसा शब्द है, जिसमें काव्य की सीमा होती है और ऐसे शब्द हमारे देश में, हमारी भाषाओं मे बहुत हैं। इसलिए इस देश मे लोग अनिच्छा से भी कवि बनते है। वे शब्द ही ऐसे होते हैं, जो अनेकविध प्रेरणा देते हैं। इसलिए मनुष्य चाहे या न चाहे, वह कवि बन जाता है। मेरा खयाल है कि भारतीय भाषाओं मे जितनी काव्य-शक्ति है, उसकी तुलना मे दुनिया की दूसरी भाषाओं में कम है। हाँ, अरबी और लैटिन मे है। संस्कृत मे यह सामर्थ्य बहुत ज्यादा है, क्योंकि वह भाषा प्राचीन काल मे निर्माण हुई है। इसलिए मनुष्य आज जिस तरह स्पष्ट रूप में सोचता है, वैसा उस समय नहीं सोचता था, अस्पष्ट रूप मे सोचता था। जहाँ मनुष्य अस्पष्ट रूप मे सोचता है, वहाँ बहुत ज्यादा सोचता है। जहाँ स्पष्ट सोचता है, वहाँ विशिष्टता आ जाती है और व्यापकता कम हो जाती है, जैसे स्वप्न मे स्पष्टता नहीं होती। परन्तु स्वप्न में जो विविधता होती है, वह दुनिया मे जो विविधता है, उससे भी ज्यादा होती है। सृष्टि में जो है, वह सब स्वप्न मे है और सृष्टि मे जो नहीं है, वह भी स्वप्न में है। स्वप्न के पेट में जाग्रति होती है।

सब लोग दत्तचित्त होकर सुन रहे थे। बाबा ने और भी ऊँची उड़ान मारी। वे बोले कि कवि की सारी सृष्टि स्वप्नमय होती है। उसका चिन्तन सूक्ष्म, अव्यक्त और इसलिए अस्पष्ट होता है। व्यावहारिक भाषा में कवि याने मूरख। कुरान में भी मुहम्मद पैगम्बर कई दफा बोले हैं कि मैं कवि थोड़े ही हूँ। मेरी समझ में नहीं आता था कि उन्होंने ऐसा क्यों कहा होगा। फिर एक जगह उनका एक वचन मिला कि "मैं कवि थोड़े ही हूँ, जो बोले एक और करे एक!" कहा जाता है कि कुरान में बहुत काव्य है। अरबी-साहित्य मे वह साहित्य की सर्वश्रेष्ठ पुस्तक मानी जाती है। यह कोई केवल काल्पनिक गौरव की बात नहीं है। कुरान धार्मिक पुस्तक है, इसलिए ऐसा कहा होगा, सो बात नहीं, आधुनिक अरबी-साहित्य को कुरान से सारी स्फूर्ति मिलती है। इतना होने पर भी उन्होंने कहा कि मैं कवि थोड़े ही हूँ, जो बोले एक और करे एक। इसका एक मतलब यह कि मैं जो बोलूँगा वह करूँगा, इसलिए मैं कवि नहीं हूँ। इसे कोई उपालम्भ मानने के बजाय हमने अधिक सुन्दर अर्थ निकाला है। उसका अर्थ यह कि आप लोगों के सामने एक स्पष्ट चिन्तन रखनेवाला हूँ, जिससे कि आपको हिदायत मिले। कवि का चिन्तन हमेशा अस्पष्ट होता है, उसके काव्य की गहराई को वह खुद नहीं जानता। उस पर परस्परविरोधी भाष्य किया जा सकता है। अगर किसी कवि ने अपनी कविता पर कोई भाष्य लिखा, तो मैं उससे बिल्कुल विरुद्ध भाष्य लिख सकता हूँ। और सम्भव है कि लोग मेरा भाष्य कबूल करें और शायद वह खुद भी कबूल करे। कवि को जो सूझता है, वह उसके स्पष्ट चिन्तन के बाहर की चीज है। कोई चीज उसे प्राप्त होती है, वह कुछ बनाता नहीं। कुछ रचना नहीं करता। सहज ही उसको चीज मिल जाती है। उसकी झाँकी मिल जाती है। कवि को क्रान्तदर्शी कहा है। कविः क्रान्तदर्शी, कवि दूर का देखता है, ऐसा कुछ लोग उसका अर्थ लगाते हैं। हाँ, वह भी हो सकता है। परन्तु उसका एक अर्थ यह भी है कि कवि बहुत ही अस्पष्ट में देखता है। जो

स्पष्ट वस्तु है, उसे तो हर कोई देखता है, पशु भी देखता है। बिना देखे जिसे भरोसा नहीं होता, चिन्तन से कोई बात नहीं मानता, कहता है—सबूत दिखाओ। सबूत को ही मानना पशुत्व है। कवि मे पशुत्व नहीं होता। इसलिए उसकी वाणी मे विविध दर्शन होता है।

फिर बेनीपुरीजी का नाम लेकर बाबा कहने लगे कि अभी बेनीपुरीजी ने बताया कि हम भूदान-यज्ञ मे मदद करना चाहते है। कोई साहित्यिक वास्तव मे मदद करेगा, तो मालूम ही नहीं होगा। अगर फलाने उपन्यास मे विनोबा को मदद की गयी है, ऐसा मालूम हो गया, तो वह फेल्योर (असफल) है। जिसमे पता ही न लगे, वही उत्तम मदद है, जैसे ईश्वर की स्थिति है। वह मदद देता है, तो उसका भान ही नहीं होता। वह बिना हाथ के देगा। बिना आँख के देखेगा। बिना कान के सुनेगा। बिना लेखनी के लिखेगा। सर्वोत्तम कवि वह हो सकता है, जिसने कुछ भी न लिखा हो। जिसने कुछ रहो लिखा हो, वह कवि ही नहीं है। महाकवि वह हो सकता है, जिसके हृदय मे इतना काव्य भर गया है कि वह प्रकट ही नहीं कर सकता। इसका अर्थ यह नहीं कि जिसने कुछ भी नहीं लिखा, वह कवि होता है। एक महाकवि ऐसा हो सकता है, जिसकी काव्य-शक्ति बहुत गहरी होने के कारण प्रकाश मे नहीं आ सकती, वाणी मे और प्रकाशन मे नहीं आ सकती। जब हम इस दृष्टि से देखते है, तो लगता है कि साहित्य का एक लक्षण यह है कि साहित्य प्रकाशित नहीं हो सकता। आजकल तो हर कोई साहित्य को प्रकाशित करने की बात सोचता है, परन्तु वह प्रकाशन की बात नहीं है, साहित्य हमेशा अप्रकाशित होता है।

बाबा की यह बात सुनकर तो साहित्यिक भाई दंग रह गये। उन्हे कुछ अन्दाज मिला कि बाबा क्या है। लेकिन बाबा का नम्र प्रवाह जारी था। उन्होने कहा कि इसलिए जब कभी हम साहित्यिको की मदद के लिए प्रार्थना करते है, उनके पास पहुँचते है, तो हम इतना ही चाहते है कि आप हमारे साथ सहचिन्तन कीजिये। हम जैसा चिन्तन करते है, उसमे

आप शरीक हो जाइये। यही हमारी माँग है। मानव के लिए यह बात सहज है। उसका यह स्वभाव है। हम आम खाते हैं, तो पास बैठे हुए मनुष्य को दिये बगैर नहीं खा सकते। इतना ही नहीं, पड़ोसी को बुलाकर खिलाते हैं। जो दूसरों को बिना बुलाये खायेगा, वह रसिक नहीं है। जो अपने रस में दूसरे को शरीक करता है, वही रसिक है। इसलिए जब हम साहित्यिकों को बुलाते हैं, तो हम कहते हैं कि हम जो रस लेते हैं, वह हम अकेले ही लेते जायँ, यह अच्छा नहीं। आप रसिक हैं, इसलिए आप भी शरीक हो जाइये। शरीक होने पर आप चाहे काव्य लिखिये या न लिखिये, हमें बहुत मदद होगी।

बाबा के ये शब्द हमको चुनौती सरीखे लगे। पर अभी सुनने को बाकी था। बाबा बोले कि मेरा तो मानना है कि जिन्होंने उक्त काव्य लिखे, वे उतने उत्तम कवि नहीं थे, जितने कि वे हैं, जिन्होंने कुछ नहीं लिखा। जो महापुरुष दुनिया को मालूम हैं, वे उतने बड़े नहीं हैं। उससे भी बड़े वे महापुरुष हैं, जो दुनिया को मालूम नहीं हैं। अव्यक्तलिंगा· अव्यक्ताचाराः। ज्ञानी का आचार अव्यक्त होता है, वह प्रकट नहीं होता। मालूम ही नहीं होता कि यह ज्ञानी है। आप हमारे अनुभव में शरीक हो जाइये, इतनी ही हमारी माँग है। शरीक हो जाने पर उसका प्रकाशन हो या न हो, शब्दों में हो या कृति में हो। एक प्रकार के शब्द मे हो या दूसरे प्रकार के शब्द में हो। एक प्रकार की कृति में हो या दूसरे प्रकार की कृति में हो। इतने सारे प्रकार में प्रकाशन हो या अप्रकाशन भी हो, उन सबसे हमें मदद मिलेगी। अप्रकाशन से ज्यादा मदद मिलेगी। हम इतना ही चाहते हैं कि आप हमारे साथ हमारे अनुभव में रामभोगी, रसभोगी हो जाइये। फिर वह शब्द में या कृति में प्रकट न हो सका, तो हमें सबसे ज्यादा मदद मिलेगी। वह चीज आपके सकल्प मे रहेगी और आप हमारे अत्यन्त निकट रहेंगे।

इसलिए जब हम साहित्यिकों का आवाहन करते हैं, तो साहित्यिकों पर

हमारे आवाहन का कोई भार नहीं। अगर किसीको महसूस हुआ कि विनोबा ने हम पर बड़ी भारी जिम्मेवारी डाली है, तो वह क्या साहित्य लिखेगा ? साहित्यिक बोझ नहीं उठा सकता और हम किसी पर बोझ नहीं डालेंगे। हम इतना ही कह रहे हैं कि हमारे साथ शरीक होने में, उस रस की अनुभूति में आनन्द है। हम चाहते हैं कि आपको भी यह आनन्द प्राप्त हो। इसीका नाम है साहित्यिकों का आवाहन और साहित्यिकों की मदद।

रात के दस बज गये थे। हम लोगों की आँखों में थकान साफ नजर आती थी। बाबा ने भी अपना संवाद खतम करते हुए कहा कि एक दफा एक गुरु के पास एक शिष्य पहुँचा। शिष्य ने कहा, "आत्मा क्या है, हम जानना चाहते हैं।" गुरु शान्त रहे। शिष्य ने दुबारा पूछा, फिर भी गुरु शान्त ही रहे। इस तरह तीन बार पूछा और तीनों बार गुरु शान्त ही रहे। चौथी बार शिष्य ने कहा, "हमने तीन-तीन बार पूछा और आप उत्तर नहीं देते हैं ?" तो गुरु ने कहा, "हमने तीन-तीन दफा उत्तर दिया और ऐसे उत्तम तरीके से दिया कि इससे बेहतर तरीका नहीं हो सकता। तो भी तू नहीं समझा। जो न बोलने से भी नहीं समझता, वह बोलने से कैसे समझेगा ?" उसी तरह साहित्यिक भी हमसे कहेंगे कि अरे कमबख्त ! न लिखने पर भी तू नहीं समझ सकता है, तो लिखने पर कैसे समझेगा ? इसलिए हमने साहित्यिकों से जो मदद माँगी है, वह केवल सहानुभूति माँगी है, हृदय की सहानुभूति माँगी है। इसलिए उसका बोझ या भार नहीं महसूस होना चाहिए। फिर इनाम देने की जिम्मेवारी हम पर मत डालिये। हम यही चाहते हैं कि दर्शन मात्र से हृदय के साथ हृदय जोड़ दिया जाय।

हृदय के साथ हृदय का जोड़—यही तो भूदान यज्ञ का सार है। यही जीवन का रहस्य है। यही सारे धर्मों, सारे शास्त्रों की सीख है। इस प्रवचन को सुनकर कई भाई हमसे कहने लगे कि संत विनोबा की विद्वत्ता तो सिर में दर्द पैदा कर देनेवाली है। एक मराठी प्रोफेसर (जो भूदान-यज्ञ के

कायल नहीं हैं) बोले कि चाहे आप इस दिग्गज से सहमत हों या असहमत, पर उनकी दृष्टि ऐसी साफ है, ऐसी पैनी है कि असर डाले बिना नहीं रहती। एक पत्र के संवाददाता ने कहा कि हमें कोई अंदाज नहीं था कि विनोबा यही है ! गजब कर दिया !

सचमुच गजब कर दिया। पर जो गजब उस सन्त की वाणी को सुनकर उस कुटिया में हुआ, वह सारे देश में, सारे समाज मे अभी होना है। मेरे मन में तब से यही शब्द गूँजा करते हैं—हृदय के साथ हृदय जोड़ दिया जाय। और कबीर का छोटा-सा पद उसकी याद बनाये रखता है :

पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, पंडित हुआ न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढ़ै सो पंडित होय॥

भगवान् करे कि इस देश के निवासी—साहित्यिक हों या दूसरे—इस ढाई अक्षर को पढ़ें, इसे अपने जीवन में समा लें और उस नये युग के चिराग साबित हों, जिसके लिए दुनिया तरस रही है। ...

कम्युनिस्ट : ६ :

भूदान-आन्दोलन विश्व-शान्ति के लिए मददगार होगा और यहाँ भूमि के सम्बन्ध में कानून बनाने के लिए भी मददगार होगा। इसलिए हम इसका अभिनन्दन करते हैं। पर आपके कहने से हमें ऐसा लगता है कि जो आज बेजमीन हैं, उनको सगठित और एकत्रित करने की आप उतनी कोशिश नहीं करते, जितनी भूमिवानों के परिवर्तन की। यह कहाँ तक ठीक है?

यह सवाल कम्युनिस्ट भाइयों ने आन्ध्र के गुंटूर जिले में बाबा से किया। कृष्णा और गुटूर जिलों में और उसके आसपास कम्युनिस्ट भाइयों का काफी प्रभाव है। कई जगह वे बाबा से मिलने भी आये। बाबा बड़े प्रेम से उनसे मिलते और उनकी शकाओं का समाधान करते थे।

उपर्युक्त सवाल के जवाब में बाबा ने कहा कि हमारी हर मीटिंग में जमीनवाले और बेजमीन लोग, दोनों ही रहते हैं। हम बेजमीनों के प्रतिनिधि के रूप में उनके हक की माँग पेश करते हैं। हम कहते हैं कि भूमि पर सबका हक है और मालकियत मिटनी चाहिए। हक मानकर आपको देना चाहिए। भूमिहीनों के सामने मिली-जुली सभा में हम यह जाहिर करते हैं। इसके कारण भूमिहीनों में अपार जाग्रति आती है, यह सब हमने हिन्दुस्तानभर में देखा।

बिहार की बात हम आपके सामने रखते हैं। वहाँ हम दो साल थे। इस आन्दोलन के परिणामस्वरूप वहाँ की भूमि के दाम आधे हो गये। हमने यह भी सुना कि दूसरे प्रान्तों में भूमि के दाम बढ़े हैं। यहाँ आन्ध्र में क्या हालत है, यह मैं नहीं जानता।

कम ही हो रहे हैं।

कोई खास असर नहीं मालूम होता। ऐसा है कि जहाँ बड़े कानून का डर है, वहाँ तो कीमत गिरती है। जहाँ वैसा कोई भय नहीं होता, वहाँ किसी प्रकार से कीमत नहीं गिरती, बल्कि यहाँ नागार्जुन सागर बनेगा, यह बनेगा, वह बनेगा, वहाँ कीमत बढ़ती भी है। परन्तु बिहार में जमीन की कीमत आधी गिर गयी, यह कोई भी जाकर देख सकता है। लोग कहते हैं कि हम जमीन खरीदें क्यों? हमारा हक है। हमें तो मिलेगी ही। यह जाग्रति बिहार में आयी। यह इस आन्दोलन के सिवा और किसी सूरत से नहीं आ सकती थी।

अब दूसरी मिसाल उड़ीसा की लीजिये। उड़ीसा में ग्रामदान हुए हैं। गाँव में जितने जमीनवाले थे, उन सबने अपनी अपनी जमीन दे दी। हम जानना चाहते हैं कि क्या बेजमीनों में जाग्रति पैदा हुए बगैर यह काम हुआ होगा? जब हम शेर का शिकार करते हैं, तो हिरन आपसे आप जाग जाता है। वैसे ही बेजमीन के प्रतिनिधि होकर उनके सामने जब हम सुनाते हैं कि उनका हक है, तो वे जाग जाते हैं। हम कहना चाहते हैं कि हम बेजमीन को जगाना चाहते हैं। और अगर हम नहीं जगा पाये हों और आप कोई उपाय सुझाते हों, तो मैं उस पर विचार करने को तैयार हूँ। कहिये, हमारे जवाब से आपको समाधान हुआ या नहीं?

कम्युनिस्ट भाई कहने लगे कि अभी तक हमारे बहुत सारे राष्ट्रीय आन्दोलन चले हैं। हम सभीमें एक स्थायी उद्देश्य होता था और एक सामयिक। इन दोनों को सामने रखते हुए जनता में जाग्रति पैदा करना और उसके कारण जनता को मंजिल पर जाने के लिए आगे चलाते हैं। इस तरह जब हम देखते हैं, तो भूदान में यह राह नहीं दिखलाई देती, बल्कि यह दिखाई देता है कि थोड़े लोगों का हृदय-परिवर्तन करके सारी जनता को ऊपर ले जाना चाहते हैं। थोड़े लोगों के हृदय परिवर्तन की बात जहाँ होती है, उस पर हमें विश्वास नहीं आता।

यह ठीक है। विश्वास और अविश्वास आपके खुद की बात है। पर

कहना हम यह चाहते हैं कि हम सबको जगाना चाहते हैं, इसलिए हम गरीब से भी दान माँगते हैं और श्रमदान लेते हैं। श्रीमानों से भूदान और सम्पत्तिदान लेते हैं। यह सब इसलिए कि गरीब-अमीर, सबकी शक्ति जाग्रत हो। यानी हम एक ऐसी जमात बनाना चाहते हैं, जिन्होंने स्वामित्व विसर्जन के तौर पर कुछ किया हो। फिर वे चाहे अमीर हों या गरीब। इस प्रकार की सेना का असर हम समाज पर डालना चाहते हैं।

इसका दूसरा परिणाम भी हम बिहार में दिखाना चाहते हैं। सरकार वहाँ 'सीलिंग' का सोच रही है। तीस एकड़ का 'सीलिंग' तय किया और उसके साथ यह भी कहते हैं कि अगर अच्छा इन्तजाम हो, तो तीन सौ एकड़ जमीन रख सकते हो। इसके परिणामस्वरूप हर कोई अच्छे इन्तजाम के नाम पर तीन सौ एकड़ रख सकता है। इसका भूदान के जरिये बहुत प्रतिकार किया गया। आवाज उठायी गयी। दिल्ली भी गये। परिणाम यह है कि तीन सौ एकड़वाली बात उठा ली जायगी। हम कबूल करते हैं कि तीस एकड़ के 'सीलिंग' से भी गरीब का काम नहीं चलेगा। फिर भी आन्दोलन का एक प्रभाव आया और मानना पड़ेगा कि इसका नैतिक प्रभाव आया।

इन लोगों को भान हुआ कि बाबा हृदय-परिवर्तन जो करना चाहता है, वह make believe है। ज्यादा नहीं तो बाबा तीन काम करना चाहता है—एक तो जनता को जगाना चाहता है। दूसरे, मालिकों का हृदय परिवर्तन चाहता है। तीसरे, सरकार पर दबाव लाना चाहता है। इतने से अगर काम न हो, तो आगे के लिए सेना तैयार करना चाहता है। इस तरह से ये चार काम हमारे सामने हैं।

जनता में उद्‌बोधन देते समय इसका कुछ-न-कुछ असर तो पड़ेगा ही। लेकिन इस तरह क्रियाशील उद्‌बोधन देने से काम नहीं चलेगा। सारी दुनिया को काम में लाने के लिए आप क्या करना चाहते हैं ?

बेजमीन हैं, इसलिए जरूरी नहीं कि उनकी ताकत है। उनमें शराबी,

गन्दे, व्यभिचारी, आसक्त भी होते हैं। हाँ, कुछ पुण्यवान् लोग भी हो गये हैं। उनका प्रेम सबको लेना चाहिए, ऐसी बात नहीं। वह श्रमदान देने को राजी हो जायँ, इस वास्ते सबको तैयार करने की प्रवृत्ति हो। ऐसी सेना तैयार हो सकती है, जिसके जरिये जेवमीनों पर दबाव डाला जा सकता है। और हमने कहा है कि अगर काम न हो, तो आगे जो करना है, उसके लिए सेना तैयार होगी। मामूली हिंसा की सेना के लिए प्रत्येक सिपाही की तैयारी की जाती है, तो इस कार्य में जिन्होंने भूमिदान दिया, श्रमदान दिया, सम्पत्तिदान दिया, उनकी भी एक सेना बनती है। अगर इसका कुछ परिणाम नहीं आता, तो पाँच लाख लोगों का दान मिलता ही नहीं।

यह ठीक है कि पूरा प्रयोग नहीं हो रहा है, क्योंकि उसके लिए सबके मन में निःशकता होनी चाहिए। उसके लिए समय लगनेवाला है।

मैं आप लोगों की, कम्युनिस्टों की ही मिसाल लेता हू। जब हम तेलगाना में घूमते थे, तो आपकी तरफ से पत्रक निकाले गये थे। उनमें कहा गया था कि यह बाबा देखने में साधु है, पर है ढोंगी। याद रखो कि यह आपको ठगने आया है। बड़े जमींदारों का एजेंट है। उसके पजे में आ जाओगे, तो लाभ नहीं, हानि ही है। इसलिए इस ढोंगी से सावधान रहो। ये पत्रक हमने अपनी आँख से देखे हैं। इस तरह जो बात करते थे, वही अब कहते हैं कि आपके मार्ग पर पूरी-पूरी श्रद्धा नहीं बैठती है, लेकिन इसमें कुछ तत्त्व जरूर है। पहले जो अत्यन्त अविश्वास था, उस पर हम जोर नहीं देते। पर उसे दूर करने में हम सफल हो सके या नहीं, लेकिन उनको इतना विश्वास जरूर हो गया कि यह आदमी ठगनेवाला नहीं है, मूर्ख भले ही हो।

रचनात्मक कार्यकर्ता भी शुरू मे कहाँ थे? पहले बाबा अकेला घूमता था। वे समझते हैं कि बाबा की बड़ी ताकत है, इसलिए उसे मिलता है। फिर उन्हें हिम्मत आ गयी। कुछ लोग काम में लगे। यह भी परिवर्तन हुआ कि नहीं?

अब ये कांग्रेसवाले तो देखते ही थे। बाबा तो मालकियत मिटाने की बात कर रहा है। उसका साथ देना कहाँ तक गलत है? होते-होते उन्होंने भी कबूल किया और बोलने लगे कि कुछ मदद करेंगे। इसकी जिम्मेवारी अब केवल बाबा पर नहीं रही। पंडित नेहरू भी बोल चुके कि सरकार पर भी जिम्मेदारी आती है। इतना परिवर्तन हुआ कि नहीं? तो इतनी बातें देखने में आयीं। कम्युनिस्टों का अविश्वास कम हुआ। सद्भावना पर विश्वास बढ़ा। कांग्रेसवालों में सहानुभूति पैदा हुई। जनता को आशा बँधी कि कोई नयी बात होगी। इतना बड़ा कार्य हुआ। देखिये, चीन में पचीस साल तक गृह-युद्ध हुआ। अगर यह हुआ हो कि जनशक्ति जगाने में इससे मदद मिली हो, तो आगे का हम सब मिलकर सोच सकते थे।

आन्ध्र प्रदेश में आधे के करीब कम्युनिस्ट हैं। कार्यकर्ताओं में भी आधे हैं। इनकी सारी शक्ति राज्य चलाने में और विरोधी दल का विरोध करने में लगती है। बाबा आता है, तो अपने निर्वाचन-क्षेत्र में आ जाते हैं। बाबा अगर दो-तीन दिन उनके निर्वाचन-क्षेत्र में है, तो दो-तीन दिन घूमते हैं। फोटो भी निकालते हैं। दस-पाँच एकड़ जमीन भी दिला देते हैं। वे कहेंगे कि हम बाबा के साथ घूमते थे।

आपसे हम पूछना चाहते हैं कि यहाँ आधे कम्युनिस्ट हैं, आधे कांग्रेसी हैं। एक बिलकुल उदासीन हैं, दूसरे जरा सहानुभूति दिखाकर निष्क्रिय हैं। बाकी और कार्यकर्ता हैं नहीं, जो जनता तक पहुँच सकते। उस हालत में अगर काम आगे नहीं बढ़ता है, तो कौन आश्चर्य की बात है। बल्कि आश्चर्य यह लगा कि काम न होने पर भी जनता में उत्साह है। बेजवाड़ा की जनता ने इस काम के लिए जो आस्था दिखायी, वह अद्भुत आस्था थी और हम कहना चाहते हैं कि बेजवाड़ा की जनता के हृदय पर हमने कब्जा कर लिया। अब यह आपका तम्बाकूवाला जिला है, इसमें हमारी क्या चलेगी, यह देखना है।

क्या कम्युनिस्टों के पास जमीन नहीं है? वे बेजमीनों में क्यों नहीं

बाँट देते ? वे कहते हैं कि सरकार करेगी। सरकार जब तक नहीं बाँटती है, तब तक जमीन के मालिक बने रहेंगे। तब कैसे चलेगा ? इसलिए हमने कहा कि इस देश में कांग्रेस और कम्युनिस्ट ऐसी पार्टियाँ नहीं हैं। यहाँ पार्टियाँ दो ही हैं—कंजूस और उदार। कंजूस पार्टीवाले सब जगह भरे हैं। कुछ थोड़े-थोड़े उदार भी कहीं-कहीं हैं। इसलिए कम्युनिस्ट यदि यह कोशिश करें कि अगर अपनी पार्टी में से कंजूस निकाल दें, तो बड़ी बात होगी। नाहक कहते हैं कि हम कम्युनिस्ट हैं। मालकियत रखे हैं, छोड़ने को राजी नहीं, बने हैं कम्युनिस्ट। हमने ऐसे घर देखे हैं कि जहाँ एक भाई कांग्रेसी है, एक कम्युनिस्ट है, एक समाजवादी है। बाप कांग्रेसी और बेटा कम्युनिस्ट—किसीका भी राज्य चला, तो हानि नहीं। यह हालत है। इस तरह कम्युनिस्टों में उदार, सच्चे, बदमाश, सब तरह के लोग हैं। वैसे ही कांग्रेस में हैं। हम कहते हैं कि शुद्धि करो। यह कसौटी लगाओ कि हर कम्युनिस्ट अपना छठा हिस्सा दे। फिर मानो हजार कम्युनिस्टों में सौ ही बच गये, तो उनसे भी आपकी ताकत बढ़ेगी। आखिर बोगस कहलाये, तो उससे क्या होनेवाला है ? यह सब सोचने की बात है।

आपने आज की सभा में कहा कि गुंटूर जिले में तम्बाकू और पैसा ज्यादा है, इसलिए यहाँ के लोग अचेतन पड़े हैं। पर अब तक सारे इतिहास में देखें, तो गुंटूर जिला ही आगे रहा है। सारे आन्ध्र में राष्ट्रीय आन्दोलन में, संस्कृति में, कला आदि सभी क्षेत्रों में गुंटूर बढ़ा-चढ़ा है। नेहरूजी ने भी इसे कबूल किया है। यहाँ की तम्बाकू और पैसे ने उन्नति करने में मदद दी है। तो आप कैसे कहते हैं कि तम्बाकू और पैसे के कारण यहाँ के लोग अचेतन रह गये ?

दूसरी बात यह है कि जनता में कुछ लोग व्यभिचारी हैं, कुछ पियक्कड़ हैं .... यह समझकर हम कैसे उद्धार कर सकते हैं ? कुछ लोग गरीब हैं। कुछ को खाने को नहीं मिलता। जनता का जीवन इस तरह गिरा हुआ है। इसको कैसे ऊँचा करें ? इस ओर देखे बिना नैतिक जोर से

उठाने की कोशिश करें, तो भले ही वह नैतिक आन्दोलन हो, पर उनका जीवन उठानेवाला आन्दोलन नहीं हो सकता।

यह सुनकर बाबा ने कहा कि पंडित नेहरू ने जो कुछ आपको सर्टिफिकेट दिया हो, उसके लिए मैं जिम्मेदार नहीं। मैंने तो वही कहा, जो मैंने देखा। न सिर्फ इसी जिले में, बल्कि दूसरों में भी न केवल तम्बाकू देखी—उसके साथ पैसा और शराब भी देखी—वहाँ कोई क्रियात्मक शक्ति हमने नहीं देखी।

मिसाल के लिए बिहार मे यहाँ की तुलना से काफी अच्छा काम हुआ। पर सब प्रकार से अच्छा हुआ, सो नहीं। वहाँ भी मुजफ्फरपुर जिले मे सबसे कम जमीन मिली। लेकिन उस जिले मे सबसे ज्यादा विद्या है। सबसे ज्यादा धन है और खूब तम्बाकू पैदा होती है। पार्टियों के भेद भी वहाँ खूब हैं। नतीजा वह है कि जमीन सबसे कम मिली। कहने का तात्पर्य यह है कि लोगों में आज जो विद्या चालू है, उसके लिए मुझे कोई आकर्षण नहीं, वह लूटने की विद्या है। विद्यार्थी पढना-लिखना जानते हैं, बाकी क्या कर सकते हैं? जो पढ-लिखकर लूटें, उनके लिए क्या कहना! पर मेरे कहने से आपको अगर चोट पहुँची है, तो माफी माँगता हूँ।

मैंने जो कहा, वह एक मूलभूत सिद्धान्त है। चीन का उत्थान तभी हुआ, जब उसने अफीम छोड़ी। जब अफीम से उद्धार हुआ, तभी वह बचा। यही हालत तेलगाना की है, आदिवासी क्षेत्रों की है। इस वास्ते नैतिक उत्थान की आवश्यकता अत्यन्त जरूरी है। फिर भी कुछ लोग नीति से गिरे हों, तो उनके लिए हमारे मन में घृणा न होनी चाहिए। ऐसा भी नहीं है कि नैतिक गिरावट गरीबों मे हो। श्रीमानों में भी है। इस वास्ते केवल नैतिक आन्दोलन हम नहीं उठाते। अगर नैतिक आन्दोलन उठाते, तो जमीन न माँगते। प्रेम, सत्य, अहिंसा आदि समझाकर चले जाते।

हमने आज सभा मे कहा कि सवा दो लाख एकड़ जमीन गरीबों मे

अब तक बँटी है। यानी गरीबों को मदद पहुँचाने का आन्दोलन चल रहा है। केवल नैतिक व्याख्यान हम नहीं देते। हाँ, यह जरूर हम मानते हैं कि नैतिक उत्थान के बिना कुछ नहीं हो सकता। उसके साथ साथ भौतिक उन्नति—खाना-कपड़ा आदि मिले—इसकी भी कोशिश होनी चाहिए।

यह आन्दोलन प्रत्यक्ष दिखा रहा है कि जमीन साक्षात् बँट रही है। हम कबूल करते हैं कि यह आपको देखने को नहीं मिला। राजाजी के हाथ से तमिलनाड में एक जगह जमीन बँटी। उन्होंने वहाँ कहा कि हमें विश्वास ही नहीं था कि कावेरी के किनारे की जमीन कोई दे देगा। पर उनके हाथ से जमीन बँटी। उस गाँव के वेजमीनों के लिए जमीन कम पड़ी, तो उसी सभा में और जमीन माँगी गयी। लोगों ने दी। इसका मतलब यह नहीं कि सबका हृदय-परिवर्तन हो गया, बल्कि कुछ ने दिया, तो उससे ताकत पैदा होती है। उसका असर पड़ता है। हमने आपसे पूछा कि आपका विधायक सुझाव क्या है। हम इस आन्दोलन के साथ और क्या जोड़ें। अगर आप कहें कि सरकार पर दबाव लाना चाहिए, तो हम दबाव लाते हैं और हम मानते है कि हमारा दबाव कम नहीं पड़ता। अगर आप चाहते हैं कि भिन्न-भिन्न राजनीतिक पार्टियों पर असर पड़े, तो वह भी पड़ता है। इसका सबूत हमने दिया। अब लोगों में जाकर समझाने का काम कौन करेगा? कार्यकर्ता ही करेंगे। इस वास्ते यह भी बड़ा काम है कि भिन्न-भिन्न राजनैतिक पार्टियों के लोगों में विश्वास पैदा कराया जाय। यह हम कर रहे हैं। यह काम गलत है, ऐसा आप नहीं कहते। अब इसमें क्या बात और जोड़ दी जाय, यह आप बताइये। आपका कोई सुझाव हो, तो उसे लेने को राजी हैं। हम न सिर्फ आपको, बल्कि आपकी कुल पार्टी को आवाहन देते हैं कि बतायें।

बेदखली की बात लीजिये। बिहार मे जितना हो सकता था, हमने किया। भूदान-समितियों को आदेश दिया कि वे इसमें पड़ें। समिति मुकर्रर की। उसने कुछ सुझाव दिये। सरकार पर दबाव आया। ब्रह्मपुर में दोबारा हमने

इस पर जोर दिया। वहाँ की सार्वजनिक सभा में हमने कहा कि बेदखली गलत काम है। और हमने यह भी कहा है, लिखा है कि बेजमीनों को डटे रहना चाहिए। पहली बार हमने काशी में कहा था कि बेदखल नहीं होना चाहिए। भूमिहीन को डटे रहना चाहिए। मार पड़े, तो कोई पर्वाह न करनी चाहिए। ये सारे व्याख्यान हमारे छपे हुए हैं। उसके पश्चात् पन्तजी ने एक आदेश निकाला कि ऑफिसरों को बेदखलियाँ रोकनी चाहिए। यह नहीं कि सब बेदखलियाँ रुक गयी हों, लेकिन कुछ परिणाम जरूर आया। यह हम अपने आन्दोलन का असर मानते हैं।

ये बेदखलियाँ क्यों होती हैं? लोभ से नहीं, डर से। डर यह है कि न मालूम सरकार क्या कानून बना दे और जमीन छीन ले। जब यह कहा जाता है कि जो खेती करे, उसकी भूमि होगी, तो जितनी भी अपने हाथ में आ जाय, बटोर लो और घरवालों में बाँट लो। यह भय की प्रेरणा है।

आप कहेंगे कि प्रदर्शन कीजिये। अभी आप लोगों की तरफ से कुछ प्रदर्शन कहीं हुआ भी था। सरकार ने पाँच-पचास लोगों को जेल में डाल दिया। दूसरे दिन क्या हुआ? परिणाम क्या आया? इस तरह प्रदर्शन करने से कुछ परिणाम होता है क्या? अगर होता है, तो हम आपके साथ आने को राजी हैं।

पर उसमें कौन-कौन आये? कजूस या उदार। ऊपर से छीनने को राजी हैं, पर अपना देने को राजी नहीं। आपने १० एकड़ तरी जमीन की 'सीलिंग' का एलान किया। क्या इससे गरीब को कुछ मिलेगा? होना यह चाहिए कि पहले गरीबों को, बेजमीनों को जमीन मिले। उसके बाद 'सीलिंग' बने। अगर गरीबों के लिए न बचे, तो काहे का 'सीलिंग'।

ईस्ट गोदावरी जिले में आपके के० वी० राव से हमारी भेंट हुई। उन्होंने हमें बताया कि वहाँ एक वर्गमील में १५०० आबादी है। तो ६४० एकड़ जमीन १५०० लोगों के लिए हुई। यह कुल भौगोलिक क्षेत्र है, जिसमें गाँव, शहर, टीले, सब आ गये। ६४० एकड़ में से १४० जगल,

अब तक बँटी है। यानी गरीबों को मदद पहुँचाने का आन्दोलन चल रहा है। केवल नैतिक व्याख्यान हम नहीं देते। हाँ, यह जरूर हम मानते हैं कि नैतिक उत्थान के बिना कुछ नहीं हो सकता। उसके साथ साथ भौतिक उन्नति—खाना-कपड़ा आदि मिले—इसकी भी कोशिश होनी चाहिए।

यह आन्दोलन प्रत्यक्ष दिखा रहा है कि जमीन साक्षात् बँट रही है। हम कबूल करते हैं कि यह आपको देखने को नहीं मिला। राजाजी के हाथ से तमिलनाड में एक जगह जमीन बँटी। उन्होंने वहाँ कहा कि हमें विश्वास ही नहीं था कि कावेरी के किनारे की जमीन कोई दे देगा। पर उनके हाथ से जमीन बँटी। उस गाँव के बेजमीनों के लिए जमीन कम पड़ी, तो उसी सभा में और जमीन माँगी गयी। लोगों ने दी। इसका मतलब यह नहीं कि सबका हृदय-परिवर्तन हो गया, बल्कि कुछ ने दिया, तो उससे ताकत पैदा होती है। उसका असर पड़ता है। हमने आपसे पूछा कि आपका विधायक सुझाव क्या है। हम इस आन्दोलन के साथ और क्या जोड़ें। अगर आप कहें कि सरकार पर दबाव लाना चाहिए, तो हम दबाव लाते हैं और हम मानते हैं कि हमारा दबाव कम नहीं पड़ता। अगर आप चाहते हैं कि भिन्न-भिन्न राजनीतिक पार्टियों पर असर पड़े, तो वह भी पड़ता है। इसका सबूत हमने दिया। अब लोगों में जाकर समझाने का काम कौन करेगा? कार्यकर्ता ही करेंगे। इस वास्ते यह भी बड़ा काम है कि भिन्न-भिन्न राजनैतिक पार्टियों के लोगों में विश्वास पैदा कराया जाय। यह हम कर रहे हैं। यह काम गलत है, ऐसा आप नहीं कहते। अब इसमें क्या बात और जोड़ दी जाय, यह आप बताइये। आपका कोई सुझाव हो, तो उसे लेने को राजी हैं। हम न सिर्फ आपको, बल्कि आपकी कुल पार्टी को आवाहन देते हैं कि बतायें।

बेदखली की बात लीजिये। बिहार में जितना हो सकता था, हमने किया। भूदान-समितियों को आदेश दिया कि वे इसमें पड़ें। समिति मुकर्रर की। उसने कुछ सुझाव दिये। सरकार पर दबाव आया। ब्रह्मपुर में दोबारा हमने

इस पर जोर दिया। वहाँ की सार्वजनिक सभा में हमने कहा कि बेदखली गलत काम है। और हमने यह भी कहा है, लिखा है कि बेजमीनों को डटे रहना चाहिए। पहली बार हमने काशी में कहा था कि बेदखल नहीं होना चाहिए। भूमिहीन को डटे रहना चाहिए। मार पड़े, तो कोई पर्वाह न करनी चाहिए। ये सारे व्याख्यान हमारे छपे हुए हैं। उसके पश्चात् पन्तजी ने एक आदेश निकाला कि ऑफिसरों को बेदखलियाँ रोकनी चाहिए। यह नहीं कि सब बेदखलियाँ रुक गयी हों, लेकिन कुछ परिणाम जरूर आया। यह हम अपने आन्दोलन का असर मानते हैं।

ये बेदखलियाँ क्यों होती हैं? लोभ से नहीं, डर से। डर यह है कि न मालूम सरकार क्या कानून बना दे और जमीन छीन ले। जब यह कहा जाता है कि जो खेती करे, उसकी भूमि होगी, तो जितनी भी अपने हाथ में आ जाय, बटोर लो और घरवालों में बाँट लो। यह भय की प्रेरणा है।

आप कहेंगे कि प्रदर्शन कीजिये। अभी आप लोगों की तरफ से कुछ प्रदर्शन कहीं हुआ भी था। सरकार ने पाँच-पचास लोगों को जेल में डाल दिया। दूसरे दिन क्या हुआ? परिणाम क्या आया? इस तरह प्रदर्शन करने से कुछ परिणाम होता है क्या? अगर होता है, तो हम आपके साथ आने को राजी हैं।

पर उसमें कौन-कौन आवे? कंजूस या उदार। ऊपर से छीनने को राजी हैं, पर अपना देने को राजी नहीं। आपने १० एकड़ तरी जमीन की 'सीलिंग' का एलान किया। क्या इससे गरीब को कुछ मिलेगा? होना यह चाहिए कि पहले गरीबों को, बेजमीनों को जमीन मिले। उसके बाद 'सीलिंग' बने। अगर गरीबों के लिए न बचे, तो काहे का 'सीलिंग'।

ईस्ट गोदावरी जिले में आपके के० वी० राव से हमारी भेंट हुई। उन्होंने हमें बताया कि वहाँ एक वर्गमील में १५०० आबादी है। तो ६४० एकड़ जमीन १५०० लोगों के लिए हुई। यह कुल भौगोलिक क्षेत्र है, जिसमें गाँव, शहर, टीले, सब आ गये। ६४० एकड़ में से १४० जंगल,

यशस्वी काम किया गया। फिर भी आपने सद्भाव से जो काम किया, उसके लिए हमारे मन में आदर है।

पर सोचने की बात यह है कि गुटूर और कृष्णा जिलों में, जहाँ आपका इतना ज्यादा प्रभाव है, वहाँ इतना थोड़ा काम हुआ, तो दूसरी जगह कितना कम हुआ होगा, इसलिए इसमें असन्तोष रखना अच्छा है। हमारे कहने का तात्पर्य यह था कि जनशक्ति बढ़ाने का काम करें।

आपने अब तक दो बातें नहीं कीं। पहले तो यह कि कोई विधायक सूचना हमे नहीं दी। हम जानते हैं कि ऐसी सूचना देना कोई आसान बात नहीं है। नकारात्मक सूचना देना आसान होता है। फिर भी आप सोचकर कोई सुझाव हो, तो हमें दें। दूसरी यह कि बीस एकड़ की जो आपने 'सीलिंग' मुकर्रर की, वह बात हमें इतनी भयानक लगती है कि उससे कम्युनिस्ट पार्टी ने अपनी बुनियाद ही खतम कर दी। इसमें अगर गलतफहमी हो, तो हमें समझा सकते हैं, लेकिन अगर सही है, तो यह बात सोचने लायक है।

इस पर हमारे कम्युनिस्ट भाई कहने लगे कि जहाँ तक बीस एकड़-वाली बात है, उसके बारे में हमारा यही निवेदन है कि जैसे आप छठा हिस्सा आरजी तौर पर माँगते हैं, वैसे ही हमने बीस एकड़वाली बात रखी है। जैसे आपका उद्देश्य है, उसी तरह हमारा भी अन्तिम उद्देश्य स्वामित्व हटाने का है। लेकिन ऐतिहासिक घटनाओं में एक स्थिति ऐसी आती है, जब जनता के 'लेविल' पर नारा देना पड़ता है। वही हमने किया। इसी तरह जनता से काम कराया जा सकता है। यह हमारा लक्ष्य नहीं है कि बीस एकड़ 'सीलिंग' रहे ही।

इसके अलावा आपने जो बात पहले कही थी, उस बारे में हम यह बताना चाहते हैं कि आंध्र में राजनीतिक पीड़ितों के नाम से सरकार द्वारा जमीन दी जाती है। पहले से जो लोग काम पर लगे थे, वे हटाये जाते हैं और राजनीतिक पीड़ितों के नाम पर ऐसे-ऐसे लोग जमीनें लेते हैं, जिनके

पास पैसा भी है, जमीन भी है। सरकार की दृष्टि मे यह बात हमने लायी है। इसमे हम आपकी भी मदद चाहते हैं, चाहे नैतिक विचार से ही क्यों न हो। राजनैतिक पीड़ितों को जमीन देना गलत है, यह आप कहें और सब मिलकर इस सवाल को उठायें।

बाबा यह सुनकर मुसकराने लगे और कहा कि एक शख्स पर कुबेर देवता प्रसन्न हुए। उन्होंने कहा, जो चाहो माँग लो। तो उस बेचारे ने दो आने की तरकारी माँगी। वह कुबेर ने दे दी। इसी तरह आपने जो हमसे माँगा, वह हम आपको दे देते हैं। हम जाहिर करना चाहते हैं कि सरकार का यह काम गलत है। जो सचमुच बेजमीन हैं, उन्हें ही जमीन देनी चाहिए। राजनैतिक पीड़ितों के नाम से इस तरह जमीन देना गलत है। यह हमने कई दफा कहा है। बात ऐसी है कि हमारी सब चीजें आपके सामने आती नहीं। हम खुद ऐसे लोगों से मिले हैं, जिन्हें सरकार ने जमीन दी थी। वे न खुद काश्त करते हैं और न कुछ काम करते हैं। केवल शोषण करते हैं। अगर खुद काश्त करते, तब तो ठीक था। इसलिए यह जमीन ऐसे लोगों को नहीं दी जानी चाहिए। आप हमारी तरफ से जाहिर कर सकते हैं। आपकी दो आने की तरकारी कुबेर ने मजूर कर ली।

हम जो छठा हिस्सा माँगते हैं, उसके माने क्या हैं? हम यह नहीं कहते कि सरकार हमारे हाथ मे आयेगी, तो छठा हिस्सा लूँगा और बाकी आपके पास रखूँगा। मैं यह कहता हूँ कि मेरा हक कबूल कीजिये और छठा हिस्सा दीजिये। यही नहीं, हम तो ग्राम-दान माँगते हैं। साढ़े आठ सौ ग्राम-दान हमें मिल भी चुके हैं। 'सीलिंग' के लिए हम जरा भी राजी नहीं हैं।

आपने कहा कि परिस्थिति के कारण 'सीलिंग' की बात आपने मान ली। यह आपने 'इलेक्शन स्टंट' तो नहीं किया, बल्कि पूरा विचार पेश किया। हम समझते हैं कि कांग्रेस भी जो 'सोशलिस्ट पैटर्न' की बात कर रही है, वह भी 'सीलिंग' की बात सोचती है। बिहार में तीस एकड़ की

'सीलिंग' होने जा रही है। वह तर-जमीन की नहीं है, इसलिए आपके बीस एकड़ से कोई ज्यादा नहीं पड़ेगा। इन्साफ से पूछा जाय, तो आपने कांग्रेस से क्या ज्यादा किया? आपने खास बात क्या की?

हम कहना चाहते हैं कि आप चुनाव के लोभ में बह गये। सीधी बात कहते, तो लोगों को शिक्षा मिलती। लोगों को संतुष्ट करने के लिए आप जब ऐसी बात करते हैं, तो यह मनोविज्ञान मैं समझ सकता हूँ। इसे जनता में हमें ले जाना होगा। यह स्पष्टीकरण मैं मान सकता हूँ। पर वैसा ही तो कांग्रेस करती है। उसके आपके 'सीलिंग' में ज्यादा फर्क नहीं है। इसलिए मैं कहना चाहता हूँ कि आपकी बात ठीक नहीं रही। किसी कारण भी आपने किया, वह बात दूसरी है। इस तरह की चीजों का परिणाम अच्छा नहीं आता। आप आज कहें कि बीस एकड़ की 'सीलिंग' होगी और फिर सत्ता आने पर यह कहें कि सबको जमीन बँटेगी, तो क्या वह आपका चलेगा? इस वास्ते ये राजनीतिक हथकण्डे हैं। इनमें कोई तत्त्वज्ञान नहीं है, इनसे जनता को कोई शिक्षा नहीं मिलती। इसके लिए कोई दलील मत कीजिये। जो गलती हुई, वह कबूल कीजिये।

जहाँ तक राजनीतिक पीड़ितों को जमीन देने की बात है, हमारी तरफ से यह पत्रक निकाल सकते हैं कि राजनीतिक लोगों को जमीन देना बिल्कुल गलत है। उनमें जो अपने हाथ से काम करते हों, उन्हें दे सकते हैं। इस काम में हम आपके साथ हैं। आप जाहिर कर दीजिये। अब आप बताइये कि हमको आप क्या देंगे?

अगर आप और चर्चा करना चाहें, तो हमारे साथ घूमने आ सकते हैं। नहीं तो हम आशा करेंगे कि आपकी मदद हमें जरूर मिलेगी। आपकी पार्टी में जो कंजूस लोग होंगे, उनको आप बाहर निकालेंगे। जो नहीं देगा, उसके लिए कहेंगे कि हमारा नहीं है। इस तरह आप कुछ करेंगे। ...

पिछले जमाने में लड़ाइयों और क्रान्तियों में उन्हीं पक्षों की जीत होती रही, जिनका संगठन बहुत मजबूत था। अगर किसी वक्त आपके आन्दोलन का तगड़ा विरोध हो, तब आप उसका कैसे सामना करेंगे? यह सवाल एक बार बाबा से एक अंग्रेज सज्जन ने पूछा, जो गत महायुद्ध में हिस्सा ले चुके थे और शान्ति के प्यासे थे।

बाबा ने कहा कि हर चीज इस बात पर निर्भर है कि कुल जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण क्या है? अगर किसी पक्ष की तरफ से हमारा विरोध होता है, तो हम उसको अपनी तरफ बदलेंगे। अगर वे राजी नहीं होते हैं, तो हमारे सामने यही रास्ता बचेगा कि उनके बीच जो दुर्भावनाएँ और बुरी बातें हैं, उनके साथ असहयोग करें। ऐसा करने पर उनमें कोई दम नहीं रह जायगा। सच बात तो यह है कि हम किसीको अपना दुश्मन नहीं समझते। लेकिन अच्छाई और बुराई में भेद जरूर करते हैं। हमको अच्छाई के साथ सहयोग करना है, बुराई के साथ असहयोग। लेकिन इस असहयोग का आधार दया और प्रेम होना चाहिए। ईसामसीह का कहना है कि बुराई का मुकाबला मत करो। हम उसमें इतना ही जोड़ते हैं कि बुराई का मुकाबला बुराई से मत करो। हमको बुराई का मुकाबला अच्छाई से करना चाहिए, जिस तरह उजाला अँधेरे का मुकाबला करता है। जहाँ उजाला है, वहीं ताकत है। दुनिया में 'बुरे लोग' नाम की चीज कोई नहीं। हमारा काम सद्भावना पैदा करना है।

हमारे अंग्रेज मित्र को इस पर सहज विश्वास नहीं हुआ। वे कहने लगे कि अनुभव तो यही बताता है कि जब तक स्वार्थ मौजूद है, तब तक स्वार्थी लोग दूसरों का शोषण करने की कोशिश करेंगे और केवल कानून ही—

जिसके पीछे बल का ही सहारा है—उन्हें रोक सकता है। कृपया यह बताइये कि आपके विचार मे अहिंसा पर आधारित समाज के अन्दर स्वार्थियों को कैसे रोका जा सकेगा ?

बाबा मुसकराये और बोले, 'जब तक स्वार्थ मौजूद है !' स्वार्थ कब तक मौजूद रहेगा ? यह कहकर बाबा उस मित्र की ओर देखने लगे और जवाब का इन्तजार किया। पर मित्र चुप रहे। तब बाबा कहने लगे कि स्वार्थ तब तक मौजूद रहेगा, जब तक आप उसे रहने की इजाजत देते हैं। हमसे अलग इसकी कोई सत्ता नहीं है। अच्छे लोग, जो समाज का पथ-प्रदर्शन करते हैं, वे अगर अहिंसा को अपना लें, तो चीजें ठीक हो जायँ। और नेता लोग भी अच्छा नेतृत्व करेंगे, अगर वे बहुमत से नहीं, सर्वसम्मति से चुने जायँ। अगर यह तरीका चालू हो जाय, तो स्वार्थ को पनपने के लिए कोई जगह न रहेगी। जाहिर बात है कि दुनिया में कोई भी केवल स्वार्थ के कारण स्वार्थी नहीं होता। आज पैसे की जो हविस है, उसकी वजह यही है कि आज का आर्थिक ढाँचा पैसे के आधार पर खड़ा है। अगर समाज का नकशा ऐसा हो, जिसमें लोगों को काम या उद्योग मिल सकें और अपनी जरूरत के मुताबिक चीजें पा सकें, तो स्वार्थी आदमी भले आदमी बन जायँगे।

हमारे मित्र की शंका दूर हुई और वे आगे बढ़े—क्या आप इस बात से सहमत नहीं हैं कि अगर अहिंसा के आधार पर हिन्दुस्तान के अन्दर एक वर्ग-रहित और स्वावलम्बी समाज बनाना है, तो वह तभी टिक सकेगा, जब इस तरह का समाज दुनिया के दूसरे हिस्सों मे भी बन जाय।

नहीं, मैं यह नहीं मानता। यह जरूरी नहीं है कि मेरी अच्छाई या नेकी दूसरों की नेकी के आधार पर रहे। अगर मै अपने रास्ते को सही समझता हूँ, तो चाहे सारी दुनिया खिलाफ हो, मैं उस पर चलता रहूँगा और एक दिन वह आयेगा, जब दूसरे भी उस पर चलने लगेंगे। आपने जो बात कही, वह तो कुछ साम्यवादियों के जैसी है। वे कहा करते हैं कि

रूस या चीन के अन्दर साम्यवाद तब तक सुरक्षित नहीं है, जब तक सारी दुनिया साम्यवादी न हो जाय। हम लोगों का विचार ऐसा नहीं है। हम मानते हैं कि अगर एक आदमी सही रास्ते पर है, तो निर्भय होकर सारी दुनिया के सामने वह खड़ा रह सकता है।

हमारे मित्र दलील करने लगे कि सामूहिक तौर से तो आदमियों पर केवल भौतिक प्रेरणाएँ काम करती हैं और उनके कोई अन्तःकरण नहीं होता। ऐसी सूरत मे अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में सत्याग्रह कैसे चल सकता है ?

बाबा ने पूछा कि क्या आपके कहने का मतलब यह है कि समूह का रूप लेने पर नेक आदमी भी बुरे बन जाते हैं ? क्षणभर रुककर बोले कि यह सम्भव कैसे है ? दो नेक आदमियों के मिलने पर नेकी दुगुनी हो जानी चाहिए, मजबूत हो जानी चाहिए। यह धारणा कि वे बुराई की तरफ झुकेंगे, सही नहीं है। आप यह कह सकते हैं कि व्यक्तियों से अलग, सरकारों, फौजों आदि के अन्तःकरण नहीं होते; लेकिन सरकार में भी व्यक्ति होते हैं और फौज में सिपाही। आप जानते हैं कि समाज का अन्तःकरण या जनमत नाम की एक चीज होती है। सदियों की सामूहिक नेकी से इसका निर्माण होता है। इसलिए मेरे खयाल में आपकी धारणा सही नहीं है।

जहाँ तक आपके सवाल के दूसरे हिस्से की बात है, यह सही है कि आज राष्ट्र एक-दूसरे से बहुत डरते हैं। अमेरिका समझता है कि वह रूस जैसा बलवान् नहीं है और रूस समझता है कि अमेरिका दिन-दिन मजबूत होता जा रहा है। भय के वातावरण में ही वे रहते हैं। यह एक कुचक्र है, जिसे तोड़ना है। अगर इन दोनों में से कोई राष्ट्र या कोई और दूसरा देश अपने हथियार अपने हाथ से खतम कर देने का साहस करे, तो उससे दुनिया का मार्गदर्शन होगा और अहिंसा के लिए रास्ता खुलेगा। मुझे आशा है कि आज नहीं तो कल दुनिया इस रास्ते पर आनेवाली है।

लेकिन मेरी समझ में यह नहीं आता कि जो राष्ट्र व्यवसाय और बड़े उद्योगों के आधार पर चलते हैं, उनके जीवन की बुनियाद अहिंसा किस तरह हो सकती है ? क्योंकि व्यवसाय और बड़े उद्योग बिना शोषण और स्वार्थसिद्धि के चल ही नहीं सकते।

दुनिया मे ऐसा कोई देश नहीं है, जो अन्न नहीं पैदा करता। हर देश अपनी खेती बढ़ा सकता है। लेकिन क्या यह जरूरी है कि व्यवसाय और उद्योग शोषण और स्वार्थसिद्धि पर ही चलें ? उद्योग के माने हैं उन चीजों को मुहैया करना, जो हमारे पास नहीं हैं। व्यवसाय माने दूसरों की मदद करना। मैं नहीं समझता कि इनकी बुनियाद में शोषण या प्रतियोगिता क्यों हो। मेरा विचार तो बिलकुल दूसरा है। जैसा कि मैंने आपसे शुरू मे ही कहा था, अगर आज का आर्थिक ढाँचा बदल दिया जाय और इसमें पैसा प्रधान न होकर, इन्सान प्रधान हो, तो शकल बहुत काफी बदल जायगी। भूदान यज्ञ के जरिये हम इसीकी कोशिश कर रहे हैं।

अगर आपको यह पश्चिमी पार्लियामेण्टरी ढाँचा पसन्द नहीं है, तो आप हिन्दुस्तान मे किस तरह की राज्य-व्यवस्था चाहते हैं ?

जिस राज्य-व्यवस्था की मैं कल्पना करता हूँ, उसके दो पहलू मुख्य हैं—एक तो विकेन्द्रित शासन और दूसरे सर्वसम्मति से निर्णय। मुझे राज्य-व्यवस्था के बाहरी स्वरूप की पर्वाह नहीं, क्योंकि वह स्थिति के अनुसार तो बदलता ही रहेगा। मिसाल के तौर पर एक परिवार लीजिये, जिसमें बच्चे हैं, वहाँ एक ढग से काम होगा। बाद मे जब बच्चे बड़े हो जाते हैं, तो ढाँचा बदलेगा। लेकिन घरेलू छाप जैसी की तैसी ही रहती है।

क्या हिन्दुस्तान के अन्दर इतना काफी जनमत नहीं है कि सरकार पर फौज खतम कर देने के लिए दबाव डाला जा सके ? हिन्दुस्तान क्यों नहीं यह कदम उठाकर दुनिया की अगुवाई करता ?

बाबा ने जवाब दिया कि दुर्भाग्य की बात है कि हिन्दुस्तान नैतिक दृष्टि से आज इतना बलवान् नहीं है कि यह कदम उठा सके। मैं आपसे सहमत हूँ कि दुनिया के सब देशों से पहले हिन्दुस्तान को यह काम करना चाहिए। जिस अनोखे ढंग से हमने आजादी की लड़ाई लड़ी, उसके कारण ही दुनिया हिन्दुस्तान से ऐसे मार्गदर्शन की आशा करती है। मेरी कोशिश यही है कि इस दशा में ही इस देश का निर्माण हो। पर अभी तक वैसा जनमत नहीं बन पाया। पं० जवाहरलाल नेहरू के नेतृत्व में भारत सरकार उसी रास्ते पर चलने की कोशिश कर रही है, जो हमें गांधीजी ने सिखाया और जिसे पण्डितजी सह-अस्तित्व कहते हैं। अगर यह विचार फैलता है, तो फौज हटाना सम्भव हो सकेगा।

लेकिन हम आपसे पूछते हैं कि इंग्लैण्ड या अमेरिका जैसे राष्ट्र यह कदम क्यों न उठायें? अमेरिका एक ईसाई देश है। वहाँ के नौजवान लोगों में काफी श्रद्धा है, उनका हृदय भी विशाल है, उनके पास काफी धन और साधन भी हैं। पर अगर ईश्वर ने चाहा, तो हिन्दुस्तान जरूर आगे आयेगा।

आज तो शान्ति के लिए अनेक प्रयत्न चल रहे हैं, उनके बारे में आपकी क्या राय है?

यह एक बहुत बड़ा सवाल है। संक्षेप में हम अपना विचार रखेंगे।

शान्ति के लिए एक कोशिश है शस्त्रास्त्र बढाना और शस्त्रों की प्रतियोगिता करना। आश्चर्य की बात है कि विज्ञान के युग में भी यह भ्रम जारी है कि राष्ट्रों के बीच शान्ति तभी बनी रहेगी, जब सारे राष्ट्र शस्त्रास्त्र से सुसज्जित और बलवान् होंगे। हिंसा से अहिंसा की स्थापना करने का यह प्रयत्न पचासों दफा निष्फल हुआ है और इसके आगे भी न सिर्फ निष्फल होगा, बल्कि सारी मानवता को भी निष्फल बनानेवाला है।

दूसरा प्रयत्न शान्ति के लिए यह चल रहा है कि कुछ राष्ट्रों के नेता सलाह-मशविरा करने के लिए टेबुल के आमने-सामने बैठते हैं, आपस में

चर्चा करते हैं। इसे संयुक्त राष्ट्रसंघ कहते हैं। लेकिन चर्चा करनेवाले इन लोगों में एक बड़ी कमी यह दीखती है कि इनमें एक-दूसरे के लिए विश्वास नहीं है। कुछ राष्ट्रों को वहाँ स्थान मिला है और चीन जैसे बड़े राष्ट्र को नहीं मिला, क्योंकि चीन पर विश्वास नहीं है। जिनको स्थान दिया गया है, वे भी एक-दूसरे को धूर्त, ठग समझकर बात करते हैं। शांति का अधिष्ठान विश्वास ही हो सकता है, अविश्वास से शान्ति नहीं हो सकती।

एक और प्रयत्न दुनिया में यह चल रहा है कि कुछ भले लोग एकत्र होकर नैतिक सैन्य-वर्धन करते हैं। उन लोगों की कोशिश यह चल रही है कि दुनिया के दूसरे देशों में जाकर कुछ अच्छे काम करें, परस्पर प्रेम पैदा हो, दोस्ती निर्माण हो। ये भले लोग हैं, लेकिन इनके मन में यह निर्णय नहीं है कि शस्त्र ग्रहण करेंगे कि नहीं।

कुछ लोग ऐसे हैं, जिन्होंने शांति के लिए तय किया है कि हम शस्त्र नहीं उठायेंगे। वे 'पैसिफिस्ट' कहलाते हैं। उनके पास निर्णय है कि शस्त्र का प्रयोग नहीं करेंगे, लेकिन युद्ध के समय शस्त्र नहीं लेनेभर से काम नहीं होगा। इसके लिए तो विधायक काम ही करने होंगे और 'पॉजिटिव' (विधायक) शक्ति ही निर्माण करनी होगी। इसके बिना काम नहीं चलेगा। इसका मतलब यह है कि पैसिफिस्टों के पास तो निर्णय है, पर उनके पास सक्रियता नहीं है।

कुछ लोग शांति के लिए शांति आन्दोलन करते हैं। ये लोग कहते हैं कि शांति की स्थापना के बिना विकास नहीं होगा। शांति की बहुत अधिक जरूरत है, क्योंकि हमें जीवनमान बढ़ाना है, दरिद्रता मिटानी है। लेकिन इतने से शांति नहीं हो सकती, क्योंकि इसमें शांति की स्वतंत्र कीमत नहीं है। शांति की कीमत उनकी निगाह मे केवल इतनी ही है कि दूसरे अनेक कामों के लिए वे शांति चाहते हैं।

तब आपकी राय मे शांति किस तरह स्थापित हो सकती है ?

हमने दुनिया मे आज जो शांति के लिए पाँच प्रयत्न चल रहे हैं, उनकी चर्चा की। पर शांति का रास्ता दूसरा ही है। शांति पानी के समान होती है। उसके दो उपयोग हो सकते हैं। फसल उगने के लिए पानी की जरूरत होती है। पानी से मनुष्य की प्यास बुझती है। तो जिसको फसल के लिए पानी की जरूरत है, उसे एक प्रकार की जरूरत है। जिसे प्यास लगी है, उसे पानी की हमेशा के लिए जरूरत है। उसके पास पानी की स्वतन्त्र कीमत है। तो देश को समृद्ध बनाने के लिए, जीवन-मान बढाने के लिए शांति का एक उपयोग होता है, और मानसिक समाधान और हृदय का समाधान होने के लिए शांति का दूसरा उपयोग होता है। जिसको फसल के लिए पानी चाहिए, वह फसल उग आने पर कहता है कि अब पानी नहीं चाहिए। जिसे समृद्धि के लिए शांति की जरूरत है, वह समृद्धि पर कहता है कि अब शांति नहीं चाहिए। लेकिन जिसे प्यास मिटाने के लिए पानी चाहिए, वह हमेशा के लिए पानी चाहता है। क्योंकि प्रेम के लिए, आत्मसतोष के लिए वह शांति चाहता है। इसलिए दुनिया मे तब तक शांति नहीं होगी, जब तक शांति की स्वतंत्र प्यास मानव को न लगे।

भूदान इसमें कहाँ तक सहायक होगा ?

भूदान का हमारा जो यह प्रयत्न चल रहा है, वह सिर्फ जमीन प्राप्त करके उसको बाँटने के लिए हम नहीं कर रहे हैं। इसलिए कर रहे हैं कि यह शांति का एक नूतन शस्त्र बने। शांति का एक स्वतन्त्र मूल्य है, यह बात लोग समझें और अपने मसले, जमीन के भी मसले शांति से हल कर लें। शांति का स्वतंत्र मूल्य स्थापित करने के लिए आज भारत को बहुत अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है।

क्या भूदान जैसी चीज हर देश के लिए लागू है, जिससे कि नौजवान

लोग, शान्ति चाहनेवाले लोग रचनात्मक काम के लिए कुछ आधार पा सकें ?

बाबा हँसकर बोले कि शान्तिवादियों को क्रियाशील बनना पड़ेगा। अहिंसक आधार पर सक्रिय बनना पड़ेगा। मेरा खयाल है कि अगर इंग्लैंड खेती की तरफ ज्यादा ध्यान दे—आज तो उद्योग की तरफ दे रहा है—तो अपने को बहुत कुछ ऊँचा उठा सकता है। जो भाई और बहन अन्तःकरण से युद्ध के विरोधी हैं, वे स्वेच्छापूर्वक गरीबी को अपनायें, क्योंकि केवल युद्ध में भाग न लेने से काम नहीं चलेगा।

फिर पलभर ठहरकर बाबा बोले कि 'टेक अप दि क्रॉस।' इसके बाद मुसकराये और बोले, लेकिन मैं समझता हूँ कि मेरे लिए यह मुनासिब नहीं है कि मै अंग्रेजों को या विदेशियों को कोई उपदेश दूँ। ...

गाँव के लोग : ८ :

उत्कल में जब बाबा घूम रहे थे, तो उनका पड़ाव मानपुर गाँव में पड़ा। मानपुर उड़ीसा का पहला गाँव है, जिसका समग्रदान हुआ। यों तो जब बाबा उत्तर प्रदेश और बिहार की पदयात्रा कर रहे थे, तब भी कई गाँव की पूरी जमीन का दान उन्हें मिला था। लेकिन उन गाँवों में वे पहुँच नहीं सके थे।

दोपहर को मानपुर के निवासी बाबा के पास आकर जमा हो गये और कुछ सुनने की इच्छा जाहिर की। बाबा ने कहा कि आप लोगों ने बहुत बड़ा काम किया है और इस गाँव का नाम सारे हिन्दुस्तान में हो चुका है। आपके गाँव ने नेतृत्व किया है, ऐसा कहा जायगा। भावी समाज इसके आधार पर बन सकेगा, इसलिए आप लोगों पर, जिन्होंने सर्वस्वदान किया है, एक बड़ी जिम्मेदारी आ जाती है। आपने सारी जमीन एक कर दी है, तो उसके आगे अब यह बात करनी है कि आगे हम यह मेरी जाति और वह उसकी जाति, यह भेद नहीं रखेंगे और एक मानव जाति पहचानेंगे। मानव की विशेषता है कि उसे दूसरे का दुःख देखकर सहन नहीं होता, खुद दुःखी होता है। जानवरों में ऐसा नहीं है। उनको अपने दुःख से दुःख और अपने सुख से सुख होता है। अगर आपको जख्म है, तो कौआ आकर चोंच मारेगा, खाना शुरू करेगा। उसको ऐसा दिल नहीं मिला कि आपके दुःख से उसे दुःख हो। भगवान् ने मनुष्य को तीन चीजें दी हैं—रामनाम लेने के लिए वाणी, सेवा करने के लिए हाथ और सब पर प्यार करने के लिए दिल। ये तीन चीजें जिसके पास हैं, वह मनुष्य-जाति का माना जायगा। अगर आप ऐसा करेंगे, तो आपकी शक्ति बढ़ेगी और आपका कल्याण होगा।

इसके बाद गाँववालों से चर्चा चली। उन्होंने बताया कि हम लोग महीने में दो बार पूर्णिमा और अमावस्या को जमा होकर गाँव की समस्याओं पर मिलकर विचार करते हैं।

बाबा ने कहा कि अमावस्या को तो अन्धेरा ही अन्धेरा रहता है, पूर्णिमा को उजाला ही उजाला है। इनमें आपको कौन दिन अच्छा लगता है?

एक मिनट की खामोशी के बाद मुखिया ने जवाब दिया कि बाबा, हमारे लिए तो सब दिन एक से हैं। हम भगवान् पर भरोसा करके चलते हैं, तो क्या अन्धेरा और क्या उजाला!

यह सुनकर बाबा बहुत खुश हुए और कहने लगे कि भगवान् की योजना में ये दोनों दिन ध्यान के लिए विशेष माने गये हैं। भक्त जब भगवान् से अलग होकर इस दुनिया में काम करता है, तो भगवान् की कृपा से उसकी रोशनी चन्द्रमा के समान प्रकट होती है और जब वह भगवान् में लीन हो जाता है, तो अमावस्या की अवस्था होती है। एक भक्त की जगह असंख्य तारे प्रकट होते हैं।

इसके बाद बाबा ने पूछा कि गाँव की सभा में आप क्या करते हैं?

गाँव के सारे सवालों पर, झगड़े, खेती बारी पर आपस में सलाह करते हैं।

गाँव के झगड़े बाहर तो नहीं जाते?

आठ साल से नहीं जाते।

आठ साल में झगड़े कुछ कम हुए?

पहले जब झगड़े का निपटारा करते थे, तो जुर्माना देते थे। अब आपस में मेल-जोल करा देते हैं।

यह बहुत अच्छा है। जब सब एक कुटुम्ब बन गया, तो जुर्माना कौन करेगा?

इसके बाद गाँव के एक भाई ने कहा कि जुर्माना करें, तो उसमें हिंसा आ जाती है, कलह बढ़ता है।

बाबा बोले—ठीक बात है, उससे सुधार नहीं होता, द्वेष ही बढ़ता है।

फिर शान्ति छा गयी। थोड़े देर मे बाबा ने पूछा कि गाँव मे उत्सव या पर्व क्या चलते हैं?

एक भाई ने जवाब दिया कि घर-घर मे स्त्रियाँ व्रत करती हैं। आठ पहर कीर्तन चलता है। अब कीर्तन के बजाय सर्वोदय-विचार से सूत कातते हैं।

बाबा ने बीच में ही कहा कि तब तो आप कर्मयोग का स्वीकार करते हैं।

उस भाई की बात जारी थी—सुबह-शाम मिलकर प्रार्थना करते हैं। हर ३० तारीख को सूत्र-यज्ञ चलता है।

इसके बाद बाबा ने पूछा कि कोई दुःख की बात या किसी चीज की कमी हो, तो बताइये?

मुखिया ने जवाब दिया कि कमी किसी बात की नहीं। फसल आस-पास से ज्यादा ही होती है……।

पलभर रुककर वे कहने लगे कि बाबा, कौन क्या कर सकता है? सब ईश्वर ही करता है। यह विचार ही जो आपने दिया है, बड़ा विचार है ……।

इतना कहते-कहते उनकी आँखों से आँसू की झड़ी लग गयी। गाँव के सभी लोग ध्यानावस्थित हालत मे कुछ आँख मूँदे हुए बैठे थे……। बाबा की समाधि लग गयी और आँसुओं की धार बह चली……।

मुखिया ने आँख पोंछकर कहा कि हम लोगों की बड़ी जिम्मेदारी है……।

उसके फिर आँसू आ गये। साहसपूर्वक उन्हें रोककर वह कहने लगा कि दो वर्ष बाद फिर जमीन का बँटवारा करेंगे।

पलभर रुककर मुखिया फिर कहने लगे कि हमने अनाज का भंडार बनाया है, जिससे हम मदद करते हैं। यह मदद बिना लिये की जाती है। अब सवाल उठा है कि जमीन का बँटवारा हो गया, गहने, जेवर और सम्पत्ति का भी बँटवारा हो जाय। तो सोचा यह है कि आगे रास्ता खुलेगा और मार्गदर्शन निकलेगा। अब हमारे गाँव की स्त्रियाँ गहने छोड़ रही हैं। बाहर का कोई कर्ज नहीं है। आपकी कृपा से हम सारा निभा लेंगे। भगवान् मदद करे, सब काम प्रेम से होता रहेगा।

बाबा ने हाथ जोड़कर प्रणाम किया। गाँववालों ने जय ध्वनि की, जिससे आसमान गूँज उठा।

× × ×

बाबा का एक पड़ाव ऐसे गाँव में पड़ा, जहाँ के लोग बर्तन बनाते थे। गाँव में ज्यादातर व्यापारी और कारीगर ही थे। लेकिन उनमें से बहुतों के पास थोड़ी थोड़ी जमीन थी। दोपहर को वे बाबा से मिलने आये और लगभग पौन घंटे तक सत्संग चला।

बाबा ने उनसे कहा कि आपमें से कुछ के पास थोड़ी-थोड़ी जमीन भी है। हम चाहते हैं कि जो जमीन आपके पास है, वह सारी की-सारी गाँव को दे दीजिये। या तो आप खेती करें या व्यापार करें।

एक भाई ने कहा कि व्यापार और खेती मिलाकर भी चलता नहीं, पेट भरता नहीं।

तो क्या खुद खेती करते हैं?

खुद तो नहीं करते।

आपका धन्धा इसी वास्ते नहीं चलता कि नाहक खेती करते हैं। खेती छोड़ें और धन्धा करें या धन्धा छोड़ें और खेती करें।

साल मे सात महीने धन्धा चलता है, पाँच महीने खाली रहते हैं। पूँजी इतनी है नहीं कि सामान स्टॉक कर सकें। सालभर काम मिले, तो बिना खेती के चल सकता है।

बाबा ने पूछा कि सालभर चलने के लिए क्या चाहिए ?

पूँजी चाहिए। पूँजी मिल जाय, तो काम चल जायगा। इसके अलावा मशीन के बने बर्तन हमारे मुकाबले में आ पहुँचे हैं।

अभी की हालत यह है कि मशीन आपके सामने है और धन्धा खतरे मे है। बढ़ रहा है या घट रहा है ?

घट रहा है। तीन वर्ष से प्लास्टिक का भी इस्तेमाल होने लगा है।

यह सुनकर बाबा ने कहा कि धन्धा घटते-घटते पाँच-छह साल में उठ जाय, तो फिर क्या करेंगे ?

जो कुछ होगा, सो किया जायगा।

खेती पर जोर क्यों नहीं लगाते ?

सिर्फ खेती पर भरोसा करके यहाँ नहीं चलेगा। यहाँ जमीन की एक ही फसल होती है। केवल धान, मूँग पैदा कर सकते हैं। पर पानी की व्यवस्था नहीं है। ऊपर से मुसीबत यह कि गाँववाले गाय छोड़ देते हैं।

बाबा ने कहा—तो आप जमीन को नाहक क्यों पकड़े रखे हैं ? चार महीने मिलते हैं, उनमे अपना कपड़ा तैयार कर लीजिये।

वर्तमान हालत मे कपड़ा बुनें, तो नहीं चलेगा।

यह सुनकर बाबा बोले—इस सबका मतलब यह है कि आप खुदकाश्त करने को तैयार नहीं हैं, जमीन छोड़ने को तैयार नहीं हैं। धन्धा टूटनेवाला है, सोचना चाहते नहीं। दूसरों से काम कराते हैं, तो ज्यादा मजदूरी देनी पड़ती है। आखिर मजदूरी आप कब तक देते रहेंगे ?

जब ऐसी सूरत पैदा होगी कि मजदूर को ज्यादा मजदूरी देनी पड़ेगी, तो हम लोग खुद मेहनत शुरू करेंगे। पर तब तक जमीन छोड़े रखें, यह चलेगा नहीं।

यानी धन्धे का भरोसा नहीं, लेकिन धन्धे को छोड़ेंगे भी नहीं। तो हम यहाँ आन्दोलन करें कि मजदूरों को ज्यादा मजदूरी दी जाय और उसके बिना वे काम पर न जायँ। यह हुआ तो आपके और मजदूरों के बीच में टक्कर आयेगी।

हाँ, सो तो होगा। जब तक समाज में यह हालत है कि कुछ लोग ऐश-आराम मे रहें, बाकी गरीब, तो संघर्ष आयेगा ही। सरकारी नौकरों को अच्छी तनख्वाह मिलती है, दूसरों को रोटी भी नसीब नहीं। तो संघर्ष टलता नहीं दिखता।

उसका उपाय यही है कि जो बेजमीन हैं, उन्हें कुछ जमीन दी जाय। वे भी धन्धा करें और आप भी धन्धे के साथ कुछ काश्त करें। यानी सारे किसान भी हो जायँ और अपना-अपना धन्धा भी हो। खेती के साथ-साथ उद्योग हो, और सब मिलकर खेती में मदद दें, और एक दूसरे की चीजें खरीदें।

बाबा की यह बात सुनकर सब पर भारी असर पड़ा। उनमें से एक वयोवृद्ध ने कहा कि आप जो बताते हैं, वही ठीक और एकमात्र रास्ता है।

बाबा बोले कि यही तो हम आपको समझाना चाहते हैं। हम जब आपसे छठे हिस्से की माँग करते हैं, तो अर्थ यही है कि आप काश्त करें और धन्धा भी चलायें। यही हमारी कोशिश है कि ऐसा सब जगह हो।

एक नौजवान ने बीच में ही सवाल किया कि यह माल जो कल-कारखानों से बनकर गाँव में आता है, उसका क्या किया जाय?

बाबा ने जवाब दिया कि वह तब तक बन्द नहीं होगा, जब तक आप मिलकर यह तय न करें कि हम सब लोग गाँव की चीजें ही खरीदेंगे। आज आप चमार का जूता नहीं खरीदते, बाटा का जूता पहनते हैं। तो चमार भी आपका बर्तन नहीं लेता। जब तक आप सब मिलकर बाहर

के माल का इस्तेमाल बन्द करने का निश्चय नहीं करते, तब तक ऐसे ही होता रहेगा।

इसके लिए तो परस्पर संगठन होना चाहिए। वह सहज बात नहीं। लेकिन सरकार इसमें बहुत कुछ कर सकती है, पर वह कुछ करती नहीं। ऊँच-नीच को बढ़ावा देती है। तीन तीन हजार रुपये की तनख्वाह देती है और हम तीस रुपये भी नहीं कमा पाते। हम सब क्या कर सकते है ?

बाबा मुसकराये और कहने लगे कि सरकार तो यह कहती है कि हम तो गाँववालों की इच्छा पूर्ण कर रहे हैं। अगर बर्तन बन्द करेंगे, चीनी बन्द करेंगे, कपड़ा बन्द करेंगे, तो आप लोग चिल्लायेंगे। ऐसा वह कहती है। लेकिन अगर आप लोग एक होकर बहिष्कार करें, तो सरकार पर दबाव आ सकता है।

यहाँ पेट भरने का सवाल ही बड़ा है। दस एकड़ जमीन है, धन्धा भी है, पर पेट चलता नहीं।

पेट भरने का रास्ता तो यही है कि सब लोग सबके पेट की चिन्ता करें। जब हम एक दूसरे का पेट मारना चाहते हैं, तो किसीका पेट कैसे भरेगा ? अगर दूसरों के पेट की चिन्ता करते हैं, तो सबका पेट भरेगा।

बाबा की यह बात सुनकर एक समझदार सज्जन ने कहा कि हमारी सरकार नोट छापती जाती है, व्यापारियों को पैसे देती जाती है और हम गरीब होते जाते हैं। यहाँ से दूध जाता है सात आने सेर और वहाँ बिकता है बारह आने सेर; फिर भी लौट आता है। जहाँ सरकार इस तरह कर रही है, वहाँ दस-पाँच हजार आदमी घेरे में रहकर अपने को बचा लें, तो कैसे होगा ? धर्म की दृष्टि से भले ही ठीक हो। लेकिन हम जो मनुष्य हैं और वस्तुस्थिति में पड़े हैं, उनके लिए यह संभव नहीं।

यह सुनकर बाबा ने कहा कि मनुष्य की जो दुर्बलता है, जो आज की वस्तुस्थिति है, उसीके अन्दर हमने यह काम शुरू किया है। चार लाख लोगों ने छत्तीस लाख एकड़ जमीन दी है। नोट की बात आप कहते हैं। नोट देखकर ही घी-दूध बेच दिया जाता है। मान लीजिये, दो सौ करोड़ नोट की जगह दो लाख करोड़ के नोट हो गये, पर आप अपनी चीज खुद क्यों न इस्तेमाल करें। पहले खायँ और फिर बेचें। पैसे का लालच करते हैं। तरह-तरह की चीजें खरीदते हैं। बाहर का माल लेना चाहते हैं। ·········लेकिन यह सरकार आपने बनायी है। आपके ही वोट से बनी है। दुर्बलता दिखाने से कैसे चलेगा? आपको वोट का अधिकार मिला है। जैसी सरकार आप चाहें, बना सकते हैं। शिकायत करने से क्या होगा? सन् '५७ में फिर से लोग आपके पास आयेंगे और आप जिन्हें चाहें, चुन सकते हैं। आप अगर चरखा चलाना चाहते हैं, तो वे चरखे को राजी होंगे, मिल चाहेंगे, तो मिल को।

इतना कहकर बाबा ने उनकी राय जाननी चाही और बोले कि अच्छा, हाथ उठाइये कि कितने लोग चरखा चाहते हैं और कितने लोग मिल चाहते हैं?

सब लोगों ने हाथ उठाये। मिल के पक्ष में ज्यादा हाथ उठे, और चरखे के लिए कम।

बाबा हँस पड़े और बोले—आप ही बताइये, अब क्या हो?

इस पर एक भाई ने कहा—सब लोग एक ही चीज के लिए कैसे राजी हो सकते हैं?

बाबा ने कहा कि लेकिन बहुमत तो हो।

इस पर सब चुप हो गये। तब बाबा ने कहा कि चरखेवालों का बहुमत अगर हुआ, तो आलसी लोगों से काम कैसे चलेगा? आप ही कहते हैं कि हमें चरखा नहीं, कपड़ा चाहिए।

नहीं, हम तो चरखा चाहते हैं। लेकिन सरकार को मदद करनी

चाहिए। वह उल्टा करती है। चावल कूटने की मिलें खुलवाती है। ग्रामोद्योग तोड़ती जाती है।

सरकार यह दावा करती है कि जिन्होंने उसे वोट दिया है, वे ग्रामोद्योग नहीं चाहते। सस्ता माल चाहते हैं। सरकार हमसे कहती है कि लोग चरखा नहीं चाहते हैं। मिल का तेल चाहते हैं, मिल का जूता, मिल का कपड़ा, मिल का आटा चाहते हैं। ऐसी हालत में आप कहते हैं कि सरकार की मदद मिले, तब यह काम होगा। सरकार कहती है कि जब आप इस तरफ कुछ बढ़ेंगे, तब वह कुछ करेगी। सरकार आपका नाम लेती है और आप सरकार का नाम लेते हैं। हम कहते हैं कि दोनों हमारा नाम लें, तो बेहतर होगा।

यह कहकर बाबा हँस पड़े और सबके सब लोग भी हँसने लगे। कुछ देर बाद उनमें से एक ने कहा कि अगर सर्वोदयवाले आयेंगे, तो उन्हें वोट देंगे। हम खुद नेता नहीं बन सकते, पर नेता आगे आयें, तो उनका साथ देंगे।

बाबा बोले कि जब तक राह नहीं मालूम होती है, जब तक तैरना नहीं आता है, तब तक हाथ पैर मारने से डूबने का ही अन्देशा है। देश में तीन करोड़ किसान हैं। चार लाख ने दान दिया है। अगर तीन करोड़, सबके सब दान दे दें या दो करोड़ ही ऐसा करें, तो यही सरकार हमारी इच्छा के मुताबिक चलेगी। अगर नहीं चलती है, तो हम सरकार भी हाथ में ले सकते हैं। लेकिन सबूत क्या है कि आप हमें चाहते हैं? एक-एक गाँव से एक एक दाता का भी दान पूरा-सा नहीं मिलता। तो समर्थन कहाँ है? अगर सब दान दें, तो हम सरकार से कह सकते हैं कि हमसे लड़ो मत और हमारी बात मानो। अगर नहीं मानते हो तो आओ, लड़ो।

जमीन तो थोड़े ही लोगों के पास है। इस वक्त जो जमीन है, वह भी अगर छोड़ दें, तो और कम हो जायगी। फिर आगे क्या होगा, कौन जाने! न इधर के रहेंगे, न उधर के। लेकिन अगर आप कहें कि बेजमीन को

जमीन देंगे, तो आपको वोट मिलेगा ही। इस हालत में बेहतर यह है कि चुनाव में खड़ा होना चाहिए।

सिर हिलाते हुए बाबा ने कहा कि सर्वोदय-विचार यह है कि बेजमीन को जमीन मिले और ग्रामोद्योग खड़े हों। हिन्दुस्तान में पाँच-छह करोड़ लोगों के पास जमीन नहीं है, इस वास्ते मध्यम-वर्ग को अनुकूल किये बगैर सर्वोदय-विचार को वोट मिलेगा, यह खयाल गलत है। आप सर्वोदय विचार कबूल करते हैं, तो इसके लिए आपमें से जिनके पास जमीन है, वे जमीन दें। जिनके पास सम्पत्ति है, वे सम्पत्तिदान दें। दोनों नहीं है, तो श्रम-दान दें। फिर हम देखेंगे कि कितनों ने दिया। ग्रामोद्योग और जमीन का बँटवारा, यह दोनों जो कबूल करते हैं, वही सर्वोदय-विचार को माननेवाले कहे जायँगे। उसीसे आपकी सहानुभूति का पता चल सकेगा। हमने कई बार कहा है कि हमें ज्यादा जमीन की दरकार नहीं है, ज्यादा देनेवालों की दरकार है। ज्यादा दाता संख्या चाहिए। इसलिए हम आपसे कहते हैं कि आप हमारा काम उठा लीजिये। काम करके दिखाइये। फिर जो भी सरकार बनेगी, वह हमारी बात मानेगी।

•••

विधायक

'आप सबके लिए जमीन चाहते हैं। जमीन तो देश में कम है। जमीन हरएक को कैसे मिलेगी ?' असेम्बली के एक सदस्य और उत्कल के प्रमुख नेता ने बाबा से यह सवाल पूछा।

बाबा ने जवाब दिया कि यह शंका साढ़े तीन साल से चली आ रही है। अब प्लानिंग कमीशन भी मान रहा है कि भूमि-हीनों को जमीन मिलनी चाहिए। अपने देश में ४८० लाख के करीब भूमि-हीन हैं। माना यह जाता है कि हिन्दुस्तान में एक मनुष्य के लिए औसत एक एकड़ जमीन होनी चाहिए। उत्तर प्रदेश में पाँच मनुष्यों के परिवार के लिए सवा छह एकड़ मानी गयी है। तो हमको लगभग ५ करोड़ एकड़ औसत जमीन चाहिए। खराब होगी, तो ज्यादा चाहिए और बहुत अच्छी होगी, तो कम में चलेगा। इस तरह पाँच करोड़ एकड़ जमीन मिल जाय, तो चल सकता है।

हिन्दुस्तान में तीस करोड़ एकड़ जमीन अच्छी है और दस करोड़ बंजर है। अगर हमको अच्छी जमीन का छठा हिस्सा मिल जाय, तो पाँच करोड़ एकड़ होगा। अभी फिलहाल उससे हिन्दुस्तान की समस्या हल होगी।

क्या आप समझते हैं कि इससे हमेशा के लिए मसला तय हो जायगा ?

नहीं, हमेशा के लिए तो नहीं। उसके लिए तो सहायक उद्योग धन्धे चाहिए। सिंचाई की योजना करनी होगी। यों हिन्दुस्तान में करने के तीन काम हैं : (१) जमीन का बँटवारा, (२) सिंचाई की योजना और (३) ग्रामोद्योग खड़े करना। तैयार माल गाँव में ही बनना चाहिए।

ये तीन बातें अगर होती हैं, तो गाँव का मसला हल होता है। इसके सिवा कोई दूसरा रास्ता नहीं है।

इस स्पष्टीकरण से नेताओं का सन्तोष तो हुआ, पर उनकी समझ में यह नहीं आता था कि बाबा हरएक के लिए जमीन क्यों चाहते हैं। इस लिए एक भाई ने सवाल पूछा कि हर किसीको जमीन देने के पीछे आपकी कल्पना क्या है ?

बाबा कहने लगे कि हमने यह एक बुनियादी चीज रखी है। मानव के हक के तौर पर एक विचार पेश कर रहे हैं। वह यह कि भू-माता की सेवा का हक हरएक को मिलना चाहिए। जैसे प्यासे को पानी चाहिए, वैसे हर किसीको खेती जरूरी है। कोई यह नहीं कह सकता कि तुम्हें खेती नहीं मिलेगी और खानों में काम करना होगा। हरएक को जमीन का हक है। हाँ, जो काश्त करना ही न चाहे, उसे जमीन नहीं देनी है। अगर हम कुछ को जमीन दें और कुछ को मिलों और कारखानों में रोजगार दें, तो कैसा रहेगा ?

आप कहेंगे, हम जमीन चन्द आदमियों को देंगे, बाकी को रोजगार। जमीन छीनना आज, रोजगार उधार। रोजगार देना है, तो गाँव में ही देना होगा। शहर के अन्दर न हवा ठीक मिलती है, न पानी। इस वास्ते काम उनको गाँव मे ही देना होगा। गाँव के उद्योग बढ़ाने होंगे। उनको सुरक्षण देना पड़ेगा।

अभी तो हम कहते हैं कि छठा हिस्सा दे दो। लेकिन यह आन्दोलन कह रहा है कि जमीन की मालकियत का विचार ही गलत है। जिस तरह हवा, पानी, आसमान और सूरज की रोशनी की व्यक्तिगत मालकियत नहीं हो सकती, उसी तरह जमीन की मालकियत नहीं हो सकती—यह उसूल हम समझा रहे हैं।

आगे चलकर बाबा ने कहा कि आप आर्थिक इकाई (Economic Unit) की बात करते हैं। हम पूछते हैं कि आपका पैमाना क्या है ?

ट्रैक्टर के लिए २०० एकड़ की इकाई होगी, बैल के लिए २० एकड़ की और हाथ से कम से भी चलेगा। हिन्दुस्तान में पाँच मनुष्यों के परिवार के लिए पाँच एकड़ जमीन काफी है। फिर आप सहयोगी खेती कर सकते हैं। लेकिन हम सहयोग लादना नहीं चाहते। सहयोगी खेती के माने सामूहिक खेती नहीं होते। हम चाहते हैं कि जमीन हरएक को दे दी जाय। फिर वे मिलकर बैल-जोड़ी ले लें, मिलकर खेती करें, जैसा चाहें करें। सहयोग को व्यवस्थित रूप देना होगा। हमारा कहना यह है कि पाँच एकड़ से ज्यादा जमीन हिन्दुस्तान की आज की हालत में आप दे नहीं सकते। बिहार में हमने देखा कि कहीं-कहीं एक हजार प्रतिवर्ग मील आबादी है। वहाँ बहुत छोटे टुकड़े करके खूब फसल पैदा करते हैं।

इस पर सहज ही शका पैदा हुई—क्या आप छोटे-छोटे टुकड़ों की खेती को प्रोत्साहन देते हैं?

बाबा ने जवाब दिया कि यह सारा विज्ञान तो आपको जरूर विकसित करना होगा। चीन जापान जैसे देशों में, जहाँ कम जमीन है, वहाँ एक परिवार में ढाई एकड़ का औसत पड़ता है। वहाँ खेती घनी (Concentrated) करते हैं। हिन्दुस्तान की दुगुनी फसल लेते हैं। हमको खेती सुधारने का साधन ढूँढना होगा। पर हमारे यहाँ जमीन जापान से दुगुनी है। यहाँ पर आबादी एक वर्गमील में ३०० की औसत है, जापान में ६००। वहाँ जमीन के टुकड़े कर रखे हैं और हाथों से खेती करते हैं। बहुत ज्यादा जमीन अगर है, तो खेती ट्रैक्टर से होगी। कम हो, तो बैलों से। बहुत कम हो, तो हाथ से। जब जन-संख्या बहुत ज्यादा होगी, तो मांसाहार खतम करना होगा। हाल ही में एक कृषि वैज्ञानिक का पत्र हमने देखा था। उन्होंने लिखा है कि मांसाहार में प्रतिव्यक्ति दो एकड़ जमीन चाहिए। लेकिन शाकाहारी बनने पर आधी एकड़ काफी होगी। इससे जैसे जनसंख्या बढ़ेगी, लोगों को दुग्धाहार पर आना पड़ेगा। फिर शाकाहार पर। मत्स्याहार की अलग बात है। पर मांसाहार टिकेगा नहीं।

स्वयमेव उसके परित्याग की जरूरत पड़ेगी। दो हजार साल बाद लोगों को हाथ से ही खेती करनी पड़ेगी। दीखता यही है कि जो जमीन है, उसमें बँटवारा करना होगा।

इसलिए हमारी मुख्य बातें यह हैं : (१) छोटे टुकड़ों में फसल बढ़ाने की योजना, (२) पानी का इन्तजाम करना, (३) सहायक ग्रामोद्योग देना, (४) पक्का माल गाँव में ही बनाना, (५) जमीन पर हर-एक का हक मानना और (६) हाथ से खेतों में शोध करना। पवनार में हमने हाथ की, बैल की, इंजिन की, तीनों तरह की खेती का प्रयोग करके देखा है।

बाबा के इतने विवेचन के बाद सबको काफी समाधान हुआ। बाबा ने कहा कि जो प्रश्न या शंका आपको हो, उन्हें आप अवश्य पूछिये। तब एक भाई ने सवाल किया कि घर की जमीन का क्या होगा?

बाबा ने जवाब दिया कि हर घर को जमीन तो मिलनी ही चाहिए। लेकिन हम चाहते हैं कि हरएक के घर के नजदीक बगीचा हो। थोड़ी जमीन इस काम के लिए दी जाय। अगर घर पीछे आधी एकड़ भी हो, तो काफी है। बाकी अलग-अलग मिलकर जैसा इन्तजाम करना चाहे, वैसा करे।

यह गहरा विषय है। अगर हमारा हृदय-परिवर्तन हो जाय, तब दूसरों को बदल सकते हैं। आज आर्थिक इकाई के नाम पर बड़े-बड़े फार्म (forms) चल रहे हैं—यू० पी० में, बिहार में भी और कल बंगाल में भी। चीनी की मिलों के साथ फार्म रहते हैं। गन्ना पैदा करने से हर साल जमीन खराब होती है। इसके पहले हिन्दू-मुसलमानों की लड़ाई चलती थी, अब गन्ने और गल्ले की लड़ाई होगी। गोरखपुर का जिला लीजिये—आबादी ज्यादा, जमीन कम। पर गन्ने के फार्म लगे हुए हैं। गल्ला पूरा मिलता नहीं, गन्ना बेचना पड़ता है। जो ईख ईंधन मे काम आती थी, वह सारी मिलों में जाती है। हम यह नहीं चाहते कि शक्कर न बने। लेकिन प्लानिंग ठीक से हो, 'रोटेशन' से हो।

दूसरी बात यह कि हिन्दुस्तान के गाँव गाँव में जो खाद है, वह बेकार पड़ी है। मनुष्य के मल-मूत्र का मूल्य छह रुपया साल का बताया जाता है। यह कुल-का कुल बरबाद हो जाता है। इसका पूरा उपयोग होगा, तो गाँव की ताकत बढ़ेगी। सिद्धान्त यह है कि जमीन से जो लिया जाय, वह सबका सब वापस दें, तो उसकी ताकत बनी रहती है। मल-मूत्र, साग-भाजी, डंठल, राख जमीन को वापस मिलना चाहिए।

इसके बाद सवालों का सिलसिला चला।

सवाल—जमीन अगर सबकी है, तो बाँटें क्यों?

बाबा ने जवाब में कहा कि ठीक सवाल पूछा। हमने तरीका रखा है कि जिसको जमीन मिलेगी, वह जमीन का मालिक नहीं हो सकता। न बेच सकता है, न रेहन रख सकता है। वह खेती करेगा, लेकिन जमीन का मालिक नहीं होगा। अगर खेती नहीं कर सकता, तो जमीन दूसरे को दी जायगी। मालकियत गाँव की होगी।

सवाल—अभी जो सरकार है, उसको आपके सारे विचार मान्य नहीं हैं। लेकिन यह देखा जाता है कि सरकार आपकी मदद कर रही है। कोई भूदान प्रचारक आये, तो वह सरकार का अतिथि होता है। इससे यह बात लोगों के दिल में आती है कि सरकार भी इसको पसन्द करती है। लेकिन लोगों के अन्दर जो चेतना आनी चाहिए, वह नहीं आयी। इस तरह क्रांति कैसे होगी?

बाबा ने जवाब दिया कि हम जो क्रांति करना चाहते हैं, उसमें जो विशेषण लगा है, वह बहुत महत्त्वपूर्ण है। वह विशेषण है अहिंसक। हमारी क्रान्ति अहिंसक होगी। यह ऐसा विशेषण है कि इससे सब कुछ बदल जाता है। इसमें दुश्मन कोई है ही नहीं। जो आज नहीं देता, वह कल देगा। जो आज अनुकूल नहीं है, वह कल अनुकूल होगा। प्लानिंग कमीशन के विरोध की बात नहीं। इन दिनों मेरा

वजन सौ पौंड है। पहले कम था। यू० पी० में ९० था। लेकिन मैं लगातार चलता ही रहा। अब यह बताइये कि यह आर्थिक हुआ या अनार्थिक? इसमें विरोध की बात नहीं, एक विचार है। प्लानिंग कमीशन ने सवाल उठाया था। कुमारप्पाजी ने भी हमसे पूछा था। मीरा बहन ने भी सवाल उठाया था। हाल ही में पार्लियामेंट में प्लानिंग मिनिस्टर से सवाल पूछा गया कि जमीन के बारे में आपकी क्या राय है? तब उन्होंने कहा कि जो विनोबा कह रहा है, उससे हम सहमत हैं। दो साल में यह फर्क पड़ा है। अब समाजवादी ढाँचा बोला जाता है। जब ऐसा है, तो गाँव की जमीन गाँव की ही करनी होगी।

जहाँ तक सरकार की सेवा की बात है, सरकार सेवा करे, तो कबूल है। लेकिन सरकार में जो दमनकारी तत्त्व है, उसका इस्तेमाल कबूल नहीं है। इसलिए शंका नहीं करनी चाहिए। कल के जो दोस्त हैं, उनको अगर दुश्मन मानेंगे, तो दुश्मनी पैदा होगी। उपनिषद् में कहा है कि ब्रह्म स्वरूप है। अगर तुम कहोगे कि पापी है, तो पापी ही पापी नजर आयेंगे।

आपको लगता होगा कि कांग्रेस में अन्तर कम हो रहा है। लेकिन अन्तर रहेगा हमेशा ही। हम उनसे आगे ही रहेंगे। अगर लोगों की शक्ति और सरकार की शक्ति एक हो जाय, तो लोगों के लिए अच्छा है।

प्रजा समाजवादी पार्टीवाले क्या कहते हैं? जमीन गाँव की हो, यह उनका विचार है। कहते हैं कि बाबा ने हमारा काम उठा लिया। हमें कबूल है। हम पूछते हैं कि अब हमारी मदद कीजियेगा या नहीं। हमने उठा लिया, तो क्या आपने छोड़ दिया? अगर उनकी शक्ति, कांग्रेस की शक्ति, सरकार की गैर-दमनकारी शक्ति, सब इसमें लग जायँ, तो चार छह महीने में काम खतम हो जायगा।

अगला सवाल यह पूछा गया कि तीन साल में आपको छत्तीस लाख एकड़ जमीन मिली, तो पाँच करोड़ एकड़ के लिए कितना समय लगेगा?

बाबा ने जवाब दिया कि यह तो तीसरे-चौथे दर्जे में बताया जाता है। यह अपना गणित नहीं, प्राइमरी स्कूल का है। हम तो कॉलेज-वाले हैं। (यह सुनकर सब हँस पड़े) पहले साल में एक लाख एकड़ जमीन मिली। तीन साल में छत्तीस लाख। तो आपको ऊँचा गणित—इन्टीगरल डिफ्रैन्शियल कैलक्युलस—इसके वास्ते सोचना पड़ेगा।

एक भाई ने यह सवाल पूछा कि कुछ जगह पर अगर लोग बहुत सख्त विरोध करें और प्रवेश ही न मिले, तो वहाँ क्या किया जाय?

बाबा ने कहा कि सख्त जमीन खोदने के लिए मजबूत औजार चाहिए। हम तो हवा पैदा कर सकते हैं। जमीन का काम हवा से बनेगा। जब हवा चलती है तो पक्षी ही नहीं, पत्ते भी उड़ते हैं। जो नैतिक असर हम चाहते हैं, वह व्यापक असर होगा। मन्त्र की शक्ति का तो हम अनुभव कर चुके हैं। जब 'भारत छोड़ो' का मन्त्र बच्चे-बच्चे ने बोला, तो वह होकर रहा। इसी तरह जब बच्चा-बच्चा बोलेगा कि हिन्दुस्तान में भूमि-हीन कोई न रहेगा, तो वह बात होकर रहेगी।

इसका मतलब तो यह हुआ कि आपके विचार के अनुसार कानून बनना चाहिए।

बाबा ने जवाब दिया कि प्रजातन्त्र का एक कर्तव्य होता है। कानून बनाने का अधिकार भी है और जिम्मेदारी भी है। लेकिन कानून बने, तो ऐसा बने कि सरकार बेवकूफ न बने। जमीन गाँव की हो, यह कानून बनेगा, तभी ठीक होगा। अगर तीस या चालीस एकड़ की 'सीलिंग' रखी जायगी, तो कुछ नहीं होनेवाला है। 'स्टेटस-को' बना रहेगा। बिहार में जब हम थे, तो एक बड़े जिले के डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट हमसे मिले। उन्होंने कहा कि हमसे तीस एकड़ के ऊपरवालों की याद़ी (सूची) माँगी गयी। तो मुश्किल से पचीस-तीस के नाम पर पचीस एकड़ से ज्यादा जमीन थी। हमने पूछा कि क्या बात है? तो बोले कि लोगों ने नाते-रिश्तेदारों में वितरण कर रखा है।

ज़रा देखिये कि बंगाल में क्या हो रहा है। जहाँ से मैं आ रहा हूँ, वहाँ की सरकार क्या कर रही है। उसने कानून भी बनाया और बेवकूफ भी बनी। वहाँ के लोग कहते हैं कि बहुत आशाजनक अनुमान लगायें, तो १२५ लाख एकड़ जमीन में से चार लाख ही मिल सकती है। अगर दो लाख भी मिल गयी, तो बहुत माना जायगा। यानी, कानून बनाकर सवा सौ लाख मे से सिर्फ दो लाख मिलेगी। और वह भी रद्दी-से रद्दी जमीन मिलेगी। लोग सारी जमीन बाँट चुके हैं। यह कानून पीछे हटकर मई, १९५३ से लागू होगा। अगर यही मंशा है कि कानून का नाटक करना है, स्टेटस-को कायम रखना है, तो बोलने की कुछ बात नहीं। फिर वह कहते हैं कि जो दो-तीन लाख एकड़ जमीन मिलेगी, उसे हम ही बाँटेंगे। कैसे बाँटेंगे? भूदान-यज्ञ से अलग पद्धति होगी। पाँच एकड़ की आर्थिक इकाई बनायेंगे। यानी, साढ़े चार एकड़वालों का पाँच एकड़ बनायेंगे। फिर साढ़े तीनवालों का पूरा करेंगे। इस तरह करते-करते सारी जमीन खतम और भूमि-हीन को कुछ नहीं मिलेगा। ऐसे कानून से क्या फायदा हो सकता है! आज कानून बने, तो यही बने कि सारी जमीन गाँव की होगी।

इस पर स्वाभाविक सवाल उठा—और यह आखिरी सवाल था—कि अगर आपके विचार के अनुसार कानून बनता है, तब तो जबर्दस्ती करनी होगी।

बाबा ने कहा कि जबर्दस्ती किस आधार पर आप कहते हैं? या तो लोकमत के आधार पर कोई काम होता है या लश्कर के बल पर। अगर लोकमत का आधार है, तब तो जबर्दस्ती कहना गलत होगा। लश्कर का आधार है, तो जरूर गलत बात होगी। लोकमत के आधार पर कानून बना सकते है। सीलिंग से गरीब को कुछ नहीं मिलनेवाला है।

एक घण्टे से ज्यादा बीत चुका था। नेताओं ने वादा किया कि हम बीच-बीच में आपसे मिलते रहेंगे। जब वह सब उठने लगे, तो एक

मिनिस्टर महोदय बोले, ऐसा लगता है कि आज हिन्दुस्तान की राजनीतिक पार्टियों को जनता का उतना डर नहीं है, जितना मध्यम-वर्ग का।

बाबा ने मुसकराते हुए कहा—यही बात है, कारण यह है कि मध्यमवर्ग के लोग बहुत शोर मचानेवाले हैं।

हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए बाबा ने सबसे विदा ली। •••

कार्यकर्ता

आपके भूदान का मर्म क्या है, यह हम नहीं समझे हैं। इसको बिना समझे हम दान कैसे माँग सकते हैं? उडीसा में यह सवाल एक बार बाबा से कुछ लोगों ने पूछा, जिनमे कार्यकर्ता थे, कुछ और लोग भी थे।

यह सुनकर बाबा ने कहा कि रामायण पूरी होने पर पूछा जाता है कि राम कौन हैं, सीता कौन हैं। इतने वर्ष से भूदान चल रहा है और अब हमसे यह सवाल आप करते हैं। तो यही समझा जायगा कि घोर निद्रा मे हैं।

हम अज्ञ हैं और मानते हैं कि निद्रा में पड़े हैं।

अगर निद्रा में हैं, तो हमारे पास आकर पूछते क्यों हैं? उड़ीसा मे लाख-सवा लाख एकड़ जमीन मिली है। ४० हजार दाताओं ने दान दिया है। उड़िया की 'ग्रामसेवक' पत्रिका के चार हजार से ऊपर ग्राहक हैं। फिर भी आपको मालूम नहीं, तो कैसे विश्वास हो?

तीन साल से हम 'ग्रामसेवक' के ग्राहक हैं।

'ग्रामसेवक' पढने से भी जब ज्ञान नहीं हुआ, तो अब हम क्या ज्ञान दे सकते हैं? दण्डकारण्य मे जब पाडव घूमते थे, तो धर्मराज की एक ऋषि से भेंट हुई। उससे उन्होंने कहा कि द्रौपदी को और हमको जितना कष्ट उठाना पड़ा, उतना किसीको न हुआ होगा। ऋषि बोले कि सीता को जितने कष्ट हुए, राम को जितने कष्ट हुए, उसके लिहाज से द्रौपदी को क्या कष्ट हुआ? तो धर्मराज पूछने लगे कि बताइये कि रामचन्द्र को क्या कष्ट हुआ, सीता को क्या कष्ट हुआ? तो क्या धर्मराज को रामचन्द्र की कथा मालूम नहीं थी? पर ऋषि आया है, इसलिए उसके मुँह से कुछ सुनना चाहिए.........

यह कहकर बाबा हँस दिये और बोले कि इसी तरह से यदि आपने भी सुनने की ठान ली है, तो हम थोड़े में कह देते हैं।

दो सौ साल पहले हिन्दुस्तान में जमीन की मालकियत नहीं थी। वह मालकियत अब बन गयी है और आज जमीन की कीमत लगायी जाती है। जमीन बेचने और खरीदने की चीज हो गयी है। गाँव-गाँव में पहले ग्रामोद्योग चलते थे और इसके जरिये गाँववाले को जरूरत की चीजें मिल जाती थीं। जिसे आज हम क्रयशक्ति कहते हैं, ग्रामोद्योग के कारण वह लोगों के पास थी। अपना कपड़ा अपने-आप बनाते थे, जो बचा, वह शहर में भेज देते थे। इसी तरह दूसरे उद्योग चलते थे। वे सारे धन्धे टूट गये। परिणामस्वरूप सारा दारोमदार खेती पर है। अब किसान को मौके पर कोई चीज खरीदनी पड़ती है, तो पैसे की जरूरत रहती है। शादी--विवाह के लिए, बीमारी के लिए, कई कारणों से पैसे की जरूरत रहती है। तो साहूकार से पैसा लेता गया और उसको जमीन लिखकर देता गया। फिर आखिर जमीन देने का जो यह आरम्भ हो गया, उसके परिणामस्वरूप जमीन की कमी हो गयी। बड़े लोग जमीन खरीदने की इच्छा करते थे। उन्होंने पैसा देना शुरू कर दिया और जमीन के दाम बढ़ गये। परिणाम यह हुआ कि बड़े मालदारों के हाथ में बहुत जमीन आ गयी और मजदूर बेजमीन हो गये।

भूदान यज्ञ अब यह चाहता है कि गाँव गाँव में ग्रामोद्योग हो जायँ और सबको जमीन मिले। जमीन की मालकियत खतम हो। इस तरह से जब सबको जमीन दी जायगी, तो गाँव का एक भाईचारा बनेगा। फिर जमीन बेची नहीं जायगी। रेहन नहीं रखी जायगी। खरीदी नहीं जायगी। जो काश्त कर सकता है, उसे जमीन मिलेगी। जो काश्त नहीं कर सकता, वह जमीन गाँव-सभा को वापस। कुल जमीन गाँव की मानी जायगी। खेती के लिए लोगों को दी गयी है—यह विचार है। बुनियादी बात इसमें यह है कि सम्पत्ति या गाँव वगैरह व्यक्तिगत सम्पत्ति नहीं हो सकते। बड़े

लोगों के पास जमीन आयी है, वह लोभ से आयी है। अब दान से इसका प्रतिकार करना है। यह दबाव से, हिंसा से नहीं किया जा सकता। हिंसा से अगर किया जायगा, तो हिन्दुस्तान कमजोर पड़ेगा। दबाव से किया जायगा, तो भी कुछ लोगों पर अन्याय होगा और कानून से लोगों का सहयोग हासिल नहीं होगा। तो गाँव की जरूरत गाँववालों के सामने रखकर भ्रातृ-भाव पैदा करना है—यह भूदान का तरीका है। मालकियत मिटाना उद्देश्य है और प्रेम और दान उसका उपाय।

इस तरह दो बातें ध्यान में आती हैं। पहली बात यह है कि एकदम से मालकियत नहीं मिटेगी। इस वास्ते आरम्भ में हम छठा हिस्सा माँगते हैं। फिर पूरा ही मिलेगा। छठा हिस्सा जमीन अगर मिल जाती है, तो हिन्दुस्तान के बेजमीनों को हम जमीन दे सकते हैं। उसके बाद ग्रामोद्योग शुरू हों और गाँव की सम्पत्ति गाँव के लोग मिलकर बढ़ायें—यह विचार पैदा होगा। जहाँ ग्रामोद्योग की बात अगर आयेगी, वहाँ कौन चीज कहाँ से ली जाय, यानी गाँव की प्लानिंग का सवाल सामने आयेगा। इस तरह ग्राम-योजना का विचार जहाँ गाँवों में आयेगा, तो गाँवों की सब जमीन गाँव की कर दी जाय, यह बात लोगों के ध्यान में आयेगी। इसलिए आज हम छठा हिस्सा माँगते हैं और विचार समझाते हैं कि कुल जमीन गाँव की हो। यह विचार लोगों को स्पष्ट होना चाहिए और आज क्या करना है, यह भी जाहिर होना चाहिए। इस तरह भूदान-यज्ञ का मुख्य विचार क्या है, इसे मैंने थोड़े में आपके सामने रख दिया "एतद्धि रामायणम्।"

यह सुनकर एक कार्यकर्ता ने कहा कि यह विचार तो बहुत अच्छा है, शास्त्रीय है, पर कार्यान्वित हो सकेगा कि नहीं, यह सवाल है।

बाबा ने कहा कि पहले आपने पूछा कि मर्म नहीं जानते। अब कहते हैं कि विचार अच्छा है। यह आपने सवाल नहीं, बल्कि अपना मत जाहिर किया है। अगर हम यह मानते होते कि विचार शक्य नहीं है, तो हम

घूमने ही नहीं। हम तो समाज में विचार का फन्चर ठोक रहे हैं। हिन्दुस्तान में हिमालय से लेकर सागर तक भूदान का विचार फैल रहा है। आप देख रहे हैं कि हमारे पास कोई संस्था नहीं है, कोई ताकत नहीं है। फिर भी अभी भूदान के बारे में कांग्रेस ने प्रस्ताव किया है और प्रजा-समाजवादी पक्ष ने भी किया है। अगर यह अव्यावहारिक होता, तो कांग्रेस और प्रजा-समाजवादी जैसी व्यावहारिक संस्थाएँ ऐसा प्रस्ताव क्यों करतीं ? आप देखते हैं कि अभी तक हमें चार लाख लोगों ने दान दिया है। अगर यह अव्यावहारिक बात होती, तो एक आदमी भी नहीं देता। एक मनुष्य वहाँ से निकला और दिल्ली पहुँच गया है, तो जाहिर है कि रास्ता जाने का है।

लेकिन यह पूछ सकते हैं कि चार लाख दान-पत्र इतने समय में मिले, तो कुल देश के लिए कितना समय लगेगा। तब तो यह सवाल भी पूछा जा सकता है कि हिन्दुस्तान में एक लड़की की शादी के लिए पन्द्रह साल लग गये, तो हिन्दुस्तान की कुल लड़कियों के लिए कितने साल लगेंगे। जवाब उसका यही है कि अगर आपकी लड़की की शादी पन्द्रह साल में होती है, तो सारे हिन्दुस्तान की लड़कियों की शादी भी पन्द्रह साल में हो जाती है। इस तरह से आप सब लोग इस काम में लग जायँ, तो चार महीनों में यह काम खतम हो सकता है। अगर आप लोग काम नहीं करते हैं, तो बात ही दूसरी है।

इसके बाद एक भाई ने कहा कि जिन्होंने जमीन दी है, दबाव से दी है, प्रेम से नहीं।

बाबा हँसकर बोले कि अर्जुन के तूणीर में जैसे बाण बहुत थे, वैसे ही आपके पास सवाल बहुत हैं। आपका यह विचार गलत है। दबाव की कोई बात ही नहीं है। बिहार में जाकर देखिये, जहाँ सैकड़ों लोगों ने प्रेम से दान दिया है।

मैं वर्धा से जब निकला, तो पहले दिन सुरगाँव गया। वहाँ एक मन्दिर है। उसके दर्शन के निमित्त नहीं, जमीन माँगने के लिए गया। गाँव के

लोगों को बुलाया और कहा कि अब मैं पंडित जवाहरलालजी से मिलने दिल्ली पैदल जा रहा हूँ। आप लोग जमीन देंगे? आप अगर देते हैं, तो मंगल होगा, शुभचिह्न होगा। एक घंटे में पचास एकड़ जमीन लेकर मैं बाहर आया। फिर मैं पवनार आया। वहाँ भी कुछ लोगों ने जमीन देकर मुझे बिदा किया। ऐसी मैं आपको हजारों मिसालें बता सकता हूँ, जब लोगों ने प्रेम से दिया है। कुछ ने आधा दिया है, कुछ ने छठा दिया है और कुछ ने सर्वस्व दिया है। अब इतने बड़े आन्दोलन को, जिसमें हजारों लोग शामिल हो गये, यह कहना कि दबाव से जमीन दी गयी है, हम बहुत अनुचित बात मानते हैं। जयप्रकाश बाबू, जाजूजी, तुकड़ोजी, दादा धर्माधिकारी, संत बाल, गोपबाबू, रविशंकर महाराज जैसे लोग घूमते हैं। यह कहना कि जबरदस्ती से, दबाव से काम करते हैं, तो विचित्र बात होगी। फिर भी यह मान सकते हैं कि जहाँ इतना सारा काम हुआ हो, वहाँ किसीने व्यक्तिगत दबाव डाला हो। समुद्र है, उसमें गंगा आती है, महानदी और गोदावरी आती है। वहाँ नाला भी आ जाता है। लेकिन जो लोग हमसे पूछते हैं इस तरह की बात कि आप कानून से जमीन छीनना पसन्द करते हैं, उस हालत में दबाव पड़ा होगा, तो क्या खराब हुआ? आखिर आप तो चाहते हैं कि जमीन गरीब को मिले। इसमें अगर नैतिक दबाव पड़ता है और इस नैतिक दबाव को दबाव मानते हैं, तब तो हम समझते हैं कि कोई काम दुनिया में हो ही नहीं सकता। उधर आप एटम बम के लिए तैयार हैं और कानून से जमीन छीनते हैं। इधर हम आते हैं और कोई जमीन देता है, तो आप कहते हैं कि दबाव से देता है, तो हम पूछते हैं कि आप हिंसा से काम करना पसन्द करते हैं या अहिंसा से? यद्यपि मैंने बहुत दफा कहा है कि बिना विचार समझाये जमीन लेना नहीं है और न विचार समझे बिना जमीन देना है। और आप दे देते हैं। कई जगह मैंने लेने से इनकार किया है। आपको हम उपनिषद् का वाक्य सुनाना चाहते हैं। उससे कुछ दृष्टि आपको मिलेगी। उपनिषद् कहता है :

भिया देयम्, ह्रिया देयम्, भिया देयम्।
संविदा देयम्, श्रद्धया देयम्, अश्रद्धया अदेयम् ॥

डर से दे दो, लज्जा से दे दो, ज्ञान से दे दो, ख्याति के खयाल से दे दो। यह आज्ञा उपनिषद् की है। उपनिषद् मंजूर करता है कि इस भय से अगर कोई दे कि अगर नहीं देंगे तो बुरा होगा, तो भी स्वीकार करना चाहिए। हम कितने ही पुण्यकार्य लोकभय से करते हैं।

अगर कोई लज्जा से देते हैं, अमुक ने दिया और हम नहीं देते, तो खराब होगा, तो इसकी भी शास्त्र इजाजत देते हैं। ज्ञानपूर्वक दे दो, यह तो इजाजत है ही। यह एक धर्मविचार है, जो मैंने आपके सामने रखा।

इसके बाद एक दूसरे भाई ने सवाल पूछा कि अगर कोई अपनी सम्पत्ति का तीसरा हिस्सा किसी पाठशाला या स्कूल को दे देता है और वहाँ खेती की व्यवस्था हो, तो आप पसन्द करेंगे ?

हम बहुत पसन्द करेंगे बशर्ते कि विद्यार्थी और शिक्षक खुद ही काम करते हों। मजदूर से काम न कराइये। पर स्कूल अगर मुनाफे से चलता है, तो अधर्म है। इस तरह मंदिरों को, आश्रमों को लोगों ने पहले जमीन दी थी। उस समय जमीन थी भी बहुत। आज तो हम मंदिर को जमीन देना पसन्द नहीं करते। लेकिन अगर पुजारी खुदकाश्त करे, तो एक-दो एकड़ दे देंगे। मतलब यह है कि जमीन किसीको नहीं देनी चाहिए, जब तक निज का परिश्रम न किया जाय।

प्रकृति त्रिगुण है। उसमें सर्वोदय कैसे कायम हो सकता है ?

बाबा ने जवाब दिया कि जब त्रिगुण में गवर्नमेण्ट चलती है, धर्म चलता है, तो हमारी बात भी क्यों न चले ?

सर्वोदय से प्रगति सम्भव है क्या ?

नहीं तो मैं कहता हूँ कि जब आप किसान-मजदूर की शरण जायेंगे, तभी आप भय से तरनेवाले हैं। जो कुछ अपने पास है, उसे मजदूर-किसान को समर्पण कीजिये। यह भगवान् खड़ा है मनुष्य के रूप में।

यह भ्रम है कि वह मछली रूप में, गिद्धरूप मे रहता है, मनुष्यरूप में नहीं।

'सृजाम्यहम्' माने अवतार?

यह भी एक अर्थ है। पर केवल यही अर्थ नहीं। जितने मनुष्य हैं, सभी रूप हैं। यदि यह कहते कि 'विनाशाय साधुनाम्', तब तो बात ही खतम हो जाती। सतोगुण में ज्ञान है, रजोगुण और तमोगुण में नहीं। कभी सत् उठता है, कभी रज और कभी तम। कोशिश यह रहनी चाहिए कि सत्गुण का वातावरण बने, तो रज और तम दबेगा और बेजमीन को जमीन मिल जायगी।

अगर बेजमीन को व्यक्तिगत रूप से दे देते हैं, तो आपको मजूर है?

अगर देना है तो हमें ही क्यों नहीं दे देते? जमीन अगर देता है, तो अपना आधिपत्य क्यों रखता है? कुछ लोग चाहते हैं कि कठा-दो कठा दे दें, ताकि मजदूर अपने काबू में बना रहे। ऐसा करना गलत है।

पूरी जमीन दे देते हैं यानी चार-पाँच एकड़ दे देते हैं और जिसे देते हैं, वह फिर बेजमीन नहीं रहता, तो वह दान हमें मजूर है।

शहरों के लोगों की सम्पत्ति का तखमीना (Assessment) ठीक से नहीं हो सकता। उनसे कैसे लें और शहर और गाँव में आर्थिक समानता कैसे आये?

अभी आर्थिक समानता का सवाल नहीं, बल्कि यह है कि जो खाता है, वह खिलाये भी। इसलिए छठा हिस्सा दे। छठा नहीं दे सकता, तो आठवाँ और दसवाँ दे।

इसके बाद सवाल पूछा गया—

गांधीजी के पास कांग्रेस संस्था थी, पर आपने कोई संस्था नहीं बनायी?

बाबा ने जवाब दिया कि उस जमाने में कांग्रेस का दूसरा रूप था। आज वह एक राजनीतिक पार्टी बन गयी है। किसी एक पार्टी से सम्बन्धित

रहना हम ठीक नहीं समझते। और अगर नयी पार्टी खड़ी कर देते हैं, तो संकुचित बन जायेंगे।

अगला सवाल था—

"क्या अपनी भूदान-क्रान्ति के पूरा करने के लिए आपने कोई समय निश्चित कर दिया है?"

बाबा ने कहा कि आज हम जिस तरह काम कर रहे हैं, उसी तरीके से हमें १९५७ तक प्रयत्न करना चाहिए। हम जानते हैं कि अगर सब लोग, जिनकी इस काम में सहानुभूति है, इसमें अपना सक्रिय सहयोग दें, तो तब तक यह काम पूरा हो सकता है। परन्तु मान लीजिये कि तब तक पूरा नहीं होता, तो आगे किस प्रकार से किया जाय, इसका संशोधन किया जायगा और यह काम तब तक किया जायगा, जब तक पूरा नहीं होगा। तो समय जो निश्चित किया है, वह चालना देने के लिए, उतने में क्या परिणाम आता है, वह आगे का देखने के लिए। यह छोटा काम नहीं है। समाज के परिवर्तन का सवाल है, मूल्यों के परिवर्तन का सवाल है। इसलिए यह पूरा करने के लिए जितना समय लगेगा, वह देना ही है। और जब तक यह काम पूरा नहीं होता, तब तक हम छोड़नेवाले नहीं हैं।

बाद का प्रश्न बड़ा रोचक था। हमारे मित्रों ने जानना चाहा कि कोरापुट (उड़ीसा) जिले में जो सात-आठ सौ ग्रामदान मिले हैं, वहाँ आपकी सर्वोदय-योजना किस तरह चलेगी?

यह सवाल सुनकर बाबा बहुत खुश हुए और उन्होंने विस्तार से कोरापुट के नव-निर्माण के काम पर रोशनी डाली। वह कहने लगे कि श्री अण्णा-साहब सहस्रबुद्धे ने, जो सर्व-सेवा-संघ के मंत्री हैं, इस बारे में एक पत्रक निकाला है। सर्व-सेवा-संघ की पूरी शक्ति इस काम में लगेगी। जमीन की मालकियत तो इतने गाँवों से मिट ही गयी। अब हरएक परिवार को कुछ जमीन दी जायगी, मालकियत के तौर पर नहीं, काम करने के लिए।

परिवार के जितने सदस्य हैं, उस लिहाज से समानता के तौर पर जमीन दी जायगी। कुछ थोड़ी जमीन सामूहिक तौर पर रखी जायगी, जिससे समाज के काम हो सकें।

दो दो, चार-चार लोगों को एक साथ मिलकर काम करने की प्रेरणा दी जायगी। परस्पर सहयोग के लिए समझाया जायगा। गाँव की फसल बँटाने की योजना की जायगी। खेती वगैरह के लिए जिस विज्ञान की जरूरत है, वह विज्ञान उनमें फैले, यह कोशिश की जायगी। फसल का कुछ हिस्सा सम्पत्तिदान के तौर पर दें, इसका प्रयत्न किया जायगा। गाँव में एक दूकान होगी, जिसके जरिये बाहर से माल खरीदा जायगा। वह दूकान खासगी न होकर गाँव की, सबकी होगी। फिर, ग्रामोद्योग बढ़ाने की कोशिश की जायगी। कम-से-कम कपड़ा तो गाँव में बनने लगे।

उनकी क्रयशक्ति बढ़ानी है। इसलिए कुछ ऐसे ग्रामोद्योग भी चलाये जायेंगे, जिनसे बना माल बाहर के लोग खरीद सकें। या प्रयत्न किया जायगा कि उन पर जो कर्जा है उससे मुक्ति मिले। ग्राम से और शहर से जो सम्पत्तिदान मिले, उससे ग्रामोत्थान की कोशिश की जायगी। गाँव-गाँव में पूरी तालीम की योजना होगी। जैसे, हर ग्राम में बचपन से मरने तक की व्यवस्था रहती है, उसी तरह हर ग्राम में युनिवर्सिटी होनी चाहिए, यह हमारी कल्पना है।

ऐसा प्रयत्न किया जायगा कि गाँव में ग्राम राज कायम हो। गाँव की सभा मे इक्कीस साल से ऊपर के सब लोग शामिल होंगे। उनकी तरफ से उपर का काम करने के लिए दस पाँच लोगों की गवर्निंग बाडी सबकी राय से चुनी जायगी। बहुमत-अल्पमतवाली बात गाँव में नहीं चलेगी। जात पाँत, छुआछूत आदि का भेद न रहे, यह कोशिश की जायगी। शादी ब्याह परिवार के लोग तय करें, लेकिन शादी का उत्सव सारे गाँव की तरफ से हो। शराब-बीड़ी आदि व्यसनों से मुक्ति का एक खास प्रयत्न

होगा। हर प्रकार के सलाह-मशविरे के लिए तज्ञ लोग उनके पास रहें, इसकी कोशिश की जायगी। गाँव में जो भी किया जायगा, सामूहिक तौर पर किया जायगा और व्यक्ति की अपनी सूझ-बूझ की हानि न हो, इसका भी ध्यान रखा जायगा। इस तरह काम चलेगा, तो जिस तरह अग्नि एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर दौड़ती है, वह ग्रामदान फैलेगा।

इसके बाद हमारे भाइयों ने पूछा कि क्या ब्रह्मपुर की अखिल भारत कांग्रेस की कमेटी की बैठक के बाद कांग्रेस की सहानुभूति से भूदान का काम बढ़ा है?

बाबा मुसकराये और बोले कि यह सारी राजनीतिक संस्थाएँ तरह-तरह के धन्धों में फँसी हुई हैं। काम करने की इच्छा कुछ लोगों को होते हुए भी उनको समय नहीं मिलता। इन पार्टियों की सारी दृष्टि सत्ता की तरफ हमेशा लगी रहती है। खासकर कांग्रेस पर तो बहुत ही बोझ है। इसलिए हम उसे गधों की जमायत कहते हैं। जिन गधों पर खूब बोझा लदा हो, उन पर और बोझा लादने में दया आती है। हमारा दावा है कि किन्हीं प्राणियों को दया की ज्यादा-से-ज्यादा जरूरत है, तो वह गधों को। इसलिए ब्रह्मपुर में उन लोगों ने सहानुभूति दिखलायी और यह वचन दिया कि यह काम अपना है, इसकी हम बहुत कीमत करते हैं।

यह भूदान-यज्ञ का काम ही ऐसा है कि अगर इसमें सबका सहयोग मिल जाय, तो एक दिन में काम खतम होता है। लेकिन एकदम सबकी शक्ति इकट्ठी होनी चाहिए। ऐसे व्यापक कामों में बड़ी बात यह नहीं कि कितने दान-पत्र मिले, कितना काम हुआ—लेकिन यह कि कितने लोगों की सहानुभूति वास्तव में हासिल हुई। हृदयपूर्वक निश्चित भाव से यह काम जरूर होना चाहिए, ऐसा किनको जँचा? अगर कुछ राजनीतिक पार्टियों को और पार्टियों से भिन्न सब लोगों को जँचा, तो फिर आगे का काम बहुत ही आसान है।

सबके घर में दीवाली का उत्सव होता है। तो सारे हिन्दुस्तान में एक

ही दिन दीवाली का उत्सव मनाया जाता है। यह दीवाली का उत्सव करना चाहिए, इसको जमाने के लिए जितना समय लगा हो, वह लगा होगा। हम नहीं जानते कि कितने बरस में यह भावना पैदा हुई होगी कि दीवाली जरूर करनी चाहिए। लेकिन एक दफा भावना पैदा हो गयी, तो जहाँ वह दिन आया और दीवाली हो गयी। वैसे ही भूमि का बँटवारा हर गाँव में होना चाहिए। गाँव में कोई भूमिहीन न रहे, कोई भूमि स्वामी न रहे—यह सबको कबूल हो जाय, तो कुल हिन्दुस्तान में कुल जमीन का वितरण एक दिन में हो जायगा।

तो आपके सवाल का जवाब यही है कि ब्रह्मपुर के बाद कांग्रेसवालों के मन में सहानुभूति पैदा हुई है।

आखिर का सवाल बहुत सुन्दर था। वह यह कि आप सरकार की तरफ से भूदान में क्या मदद की आशा करते हैं?

पत्र-प्रतिनिधियों की तरफ बाबा ने मुसकराहट के साथ देखा और कहने लगे कि हम यह आशा करते हैं कि यह स्टेट जल्द से जल्द क्षीण हो जाय और लोगों के हाथ में कारोबार आ जाय। विकेन्द्रित उद्योग शुरू हो जाय। जमीन का बँटवारा हो, सम्पत्ति का बँटवारा हो, राज कारोबार का बँटवारा हो। इस प्रकार की जो मदद हमको सरकार की तरफ से मिले, वह हम चाहते हैं। भस्मासुर को वरदान मिला था कि जिसके सिर पर हाथ रखे, वह खतम। तो विष्णु भगवान् ने ऐसी युक्ति की कि भस्मासुर खुद ही अपने सिर पर हाथ रखकर खतम हो जाय। डिमाक्रेसीरूपी शंकर को वरदान मिला है कि तुम सारी दुनिया को खतम कर सकते हो। तो हम सर्वोदयवाले ऐसी युक्ति की खोज में हैं कि यह सत्ता अपने ऊपर हाथ रखकर अपना खातमा प्रीति से कर ले। प्रेम से यह काम हो। •••

महिलाएँ

: ११ :

'भगवान् कृष्ण के बाद नारी-समाज की जितनी सेवा, स्त्रियों के लिए जितना परिश्रम महात्मा गांधी ने किया, उतना शायद ही हमारे इतिहास में किसी दूसरे ने किया हो'—इन शब्दों में एक गम्भीर नेता और उच्च-कोटि के तत्त्वज्ञानी ने महिला जाति के अन्दर जो क्रान्तिकारी काम महात्मा गांधी ने किया, उसके प्रति अपना अभिनन्दन प्रकट किया। असहयोग आन्दोलन, सत्याग्रह, विदेशी माल का बहिष्कार और रचनात्मक कार्यक्रम—इन सबने नारी-जगत् में एक नयी चेतना पैदा की और उनको आजादी की लड़ाई में आगे किया। शायद इतिहासकार यह स्वीकार करेंगे कि स्वतन्त्रता-संग्राम में जितना उम्दा और शानदार हिस्सा हिन्दुस्तान की औरतों ने लिया, उसकी मिसाल किसी दूसरे देश के जीवन में नहीं मिलती। लेकिन इससे कौन इनकार करेगा कि भारत की नारी अभी तक अपने पूरे रूप से नहीं खिली है और नये मानव के निर्माण में जोरदार हिस्सा लेने के पहले अभी उसको कई सीढ़ियाँ पार करनी हैं।

आजादी के बाद एक अजीब बात यह हुई कि हमारी माताएँ सार्वजनिक क्षेत्र से हट गयीं। आजकल की दलबन्दी की जो विषैली राजनीति है, उसमें वे कारगर साबित हो ही नहीं सकतीं। इसलिए समाज-सेवा के काम से उनके हटने पर जहाँ हर किसीको दुःख होगा, वहाँ ताज्जुब नहीं होगा। यही कारण है कि अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी ने अपने विधान में तरमीम की है और हर कांग्रेस समिति में सौ सदस्यों के पीछे कम-से-कम पाँच स्त्रियों के नामजद करने की गुंजाइश रखी है। स्त्री स्वभाव से ही रचनात्मक है, इसलिए उसे रचनात्मक काम में दिलचस्पी ज्यादा है। वह बिगाड़ती नहीं, बनाती है। यही वजह है कि लोकशक्ति निर्माण करनेवाले भूदान-यज्ञ-

आन्दोलन की तरफ उसका आकर्षण हुआ। फिर अहिंसा को व्यावहारिक रूप देने मे पुरुष की अपेक्षा नारी कहीं ज्यादा कुशल व निपुण है। बड़ी खुशी की बात है कि भूदान-यज्ञ के अन्दर कुछ अत्यन्त उत्तम और मार्मिक दान महिला कार्यकर्ताओं ने प्राप्त किये हैं। यही नहीं, कुछ बहुत आश्चर्य-जनक भूदान-प्राप्ति में भी स्त्री समाज का महत्त्वपूर्ण हाथ रहा है। उस रोमाञ्चकारी वर्णन में हम इस समय नहीं जायँगे। पर यह कहे बिना नहीं रह सकते कि भूदान-यज्ञ में पूरे गाँव की जो पहली आहुति दी गयी—उत्तर प्रदेश के हमीरपुर जिले के मँगरौठ नाम के गाँव का पूरा दान—उसमें वहाँ की महिलाओं ने भी पुरुषों पर असर डाला और इतिहास के पृष्ठों पर एक अनोखा, अभूतपूर्व परिच्छेद लिखा।

इन सब कारणों से भूदान-यज्ञ-आन्दोलन में महिला कार्यकर्ताओं की संख्या बढ़ रही है। कई ने तो जीवनदान भी दिया है। इनमें से बहुत-सी बहनें गत सर्वोदय-सम्मेलन में पुरी आयी थीं। सन्त विनोबा ने उनको एक घंटा समय अलग से दिया और उनके रोचक सवालों के जवाब दिये।

बाबा बड़ी प्रसन्न मुद्रा मे थे। एक बहन ने पूछा कि क्या सार्वजनिक काम के लिए छह महीने की ट्रेनिंग—जैसी कस्तूरबा ट्रस्ट या दूसरी संस्थाओं में मिलती है—काफी नहीं है? तो बाबा कहने लगे कि हमारे एक मित्र थे। उनके लड़के की शादी थी। हमसे उन्होंने पूछा कि लड़की किस प्रकार की हो? हमने लिख दिया कि उसमें तीन गुण होने चाहिए। श्रम करने को सदा तैयार हो, चरित्रवान् हो और पढ़ी-लिखी न हो। हमने यह भी लिखा कि पहले दो गुण हों और तीसरा न भी हो, तो माफ हो जायगा। हमारे मित्र को बड़ा ताज्जुब हुआ, लेकिन उनकी स्त्री ने कहा कि बाबा ठीक तो कहता है। अगर लड़की अपढ़ है, तो जैसी हम चाहेंगे, उसे ट्रेनिंग दे लेंगे। कोरा कागज अच्छा होता है, क्योंकि उस पर जो चाहे लिख सकते हैं। पर कागज पर अगर पहले से ही कुछ लिखा है, तो कैसे बनेगा?

आगे चलकर उन्होंने कहा कि अगर हम बुनियादी काम करना चाहते हैं, तो जहाँ तक हो सके, अपढ़ लड़कियाँ ली जायँ। उनको दो-तीन साल की ट्रेनिंग दी जाय। इसलिए मैट्रिक या मिडिल पासवाली बहनें नहीं टिकेंगी। बहुत ज्यादा बुद्धिमानी की अपेक्षा हम न रखें। बहनें चरित्रवान् हों, निष्ठावान् हों। हम उनसे काम लेते जायँ और तालीम भी देते जायँ।

इसके बाद एक विचारवान् माता ने पूछा कि आप भूदान-यज्ञ में दो साल का समय हरएक से माँगते हैं। हमारे जैसी बहनें क्या करें, जिनके छोटे-छोटे बच्चे हैं ?

बाबा बोले कि हम कह सकते थे कि बच्चों की परवाह किये बगैर लग जाओ, पर हमने यह नहीं कहा। हम भी एक दफा छोटे बच्चे थे। अगर हमारी माँ हमें छोड़कर भूदान में या और किसी काम में लग गयी होती, तो बड़ी मुश्किल हो जाती (इस पर सभी बहनें हँस पड़ीं)। थोड़ी देर रुककर बाबा ने कहा कि माताएँ तो बच्चों को पालते पालते सर्वोदय का विचार सिखा सकती हैं।

यह सुनकर बहनें चुप रहीं। बाबा कहने लगे कि औरतें जब सामने आयेंगी, तब उनकी नैतिक प्रतिष्ठा बढ़ेगी। हमारे देश के धर्म की रक्षा का काम पुरुष की अपेक्षा स्त्री ने ज्यादा किया है। आजकल स्त्री-पुरुष के समान अधिकार की बात की जाती है। हाँ, दोनों के अधिकार बराबर हैं। स्त्री को भी पुरुष की तरह गिरने का हक है, पर चढ़ने का कर्तव्य है। आज भी समाज में स्त्री का नैतिक स्तर ऊँचा है। वह और भी ऊँचा उठना चाहिए। आजकल पढ़े-लिखे घरानों में सेवा लेने का अधिकार माना जाता है। सेवा देना किसीका कर्तव्य नहीं समझा जाता। इसलिए नौकर आता है। लेकिन नौकर ज्यादा तनख्वाह माँगता है। कम तनख्वाह पर वह सेवा कैसे करे ? लिहाजा कशमकश चलती है। आँख बन्द करके रसोई खानी पड़ती है। (स्वर्गीय सेठ जमनालाल बजाज की धर्मपत्नी की तरफ इशारा करते हुए बाबा ने कहा) यह बात जानकीबाई जानती है।

सेवा-परायण जानकी माताजी ने कहा, अजी, महीने बीत जाते हैं, चूल्हा नहीं जलता। दोनों मियाँ बीबी कहते हैं कि जाय चूल्हा चूल्हे में। इस पर सभी जोर से हँस पड़ीं।

फिर एक बहन ने सवाल पूछा कि गाँव में भूदान का काम कैसे करें?

बाबा ने बताया कि बहुत काम किया जा सकता है। जिस गाँव में पूरी जमीन मिली है, वहाँ कस्तूरबा-केन्द्र चलाइये, नयी तालीम का केन्द्र चलाइये। इससे समन्वय होगा। जहाँ बहुत-से लोगों ने दान दिया हो या छठा हिस्सा जमीन मिल चुकी हो, वहाँ भी जाकर बैठ सकती हैं।

और भूदान के बाद?

भूदान से काम खतम नहीं होता। यह तो शादी की तरह है—जिसके बाद सारा संसार शुरू होता है। जमीन बाँटनी है, उसके साथ कुआँ, बीज, बैल वगैरह देना है। इसके बाद तालीम है, सफाई है, ग्रामराज का पूरा काम है। भूदान-यज्ञ के लिए जीवन देने का मतलब है, भूदान-यज्ञमूलक ग्रामोद्योगप्रधान अहिंसक क्रान्ति के लिए जीवन। यह सूत्र आपको समझ लेना होगा। यह पूरी क्रान्ति का काम है।

आखिर में एक बहुत वयोवृद्ध, कर्मठ और धर्मरत माता उठी और पूछा कि आप स्त्रियों से क्या अपेक्षा रखते हैं?

यह सवाल सुनकर बाबा को बहुत आनन्द हुआ और उन्होंने कहा कि आपसे बहुत अपेक्षा है। पुरुष तो आज घोड़ों के समान दौड़ रहे हैं। स्त्रियों का काम है कि लगाम लगायें। माने इसके यह कि पुरुष बाहर काम करते हैं, स्त्रियाँ घर में। पुरुष को घर में सहयोग देना चाहिए और स्त्री को बाहरी काम का मौका मिलना चाहिए। बाहर का काम पुरुष के हाथ में रहे, तो उज्र नहीं, बशर्ते कि वह अच्छी तरह चलाते होते। आज तो हर २५ साल बाद युद्ध होते हैं। अब फिर युद्ध का डर है। यह क्यों होता है? पुरुष का जो काम करने का ढंग है, उससे अशान्ति फैलती है। तो हम यह आशा रखते हैं कि

स्त्रियाँ चरित्रवान्, निग्रहवान् और बुद्धिमान् बनें और पुरुष को गलत रास्ते पर जाने से रोकें। स्त्री की हुकूमत चलनी चाहिए।

अपनी बात का खुलासा करते हुए संत विनोबा ने कहा कि इसके लिए हमने सुझाव रखा है कि बारह साल की उम्र तक के लड़के लड़कियों के शिक्षण का काम स्त्रियों को सौंपना चाहिए। उससे समाज स्त्री के अंकुश में रहेगा। लेकिन पश्चिम में तो स्त्रियाँ ही पढ़ाती हैं, फिर भी युद्ध होते हैं। कारण यही है कि वहाँ वे कहती हैं कि पुरुष की तरह लड़ाई के लिए हमारी भी पलटन बने। यहाँ भी ऐसा हुआ, तो जो काम पुरुष ने बिगाड़ा है, वह स्त्री से और भी बिगड़ेगा। इससे तो बेहतर है कि वे घर में ही काम करें। पर हम चाहते हैं कि स्त्रियाँ बाहर आकर समाज-नियमन के लिए काम करें। जिस दिशा में समाज जा रहा है, उसे तब वे बचा लेंगी।

•••

पत्रकार

संत विनोबा के भूदान-यज्ञ आन्दोलन ने दुनिया के समझदार और विचारवान् लोगों का ध्यान अपनी ओर खींचा है। विदेशी अखबार भी इसमें काफी दिलचस्पी दिखलाते हैं। दूर-दूर देशों के यात्री अक्सर संत विनोबा से मिलने आते हैं। हिन्दुस्तान के दूर देहात में उनसे मिलकर इन विदेशी भाइयों को इस अनोखे आन्दोलन का कुछ परिचय मिलता है। साथ ही उस नये जीवन की झाँकी मिलती है, जो आज यहाँ की मिट्टी मे फूट रहा है। अक्सर पत्रकार कई दिन तक बाबा के साथ भी रहते हैं। बाबा से चर्चा करते हैं। कभी यह चर्चा बड़ी रोचक रहती है।

एक भाई ने पूछा कि अगर आपको पचास साल शान्ति के दिये जायँ, तो सन् २००० में भारतीय समाज का नमूना कैसा होगा? क्या पश्चिम के देशों की तरह उसका भी औद्योगीकरण हो जायगा या कुछ और सूरत होगी?

बाबा मुसकराये और बोले, सवाल तो यह होना चाहिए कि अगर पचास साल शान्ति के दिये जायँ, तो मैं किस तरह का समाज पसन्द करूँगा। लेकिन आप तो मुझसे मानो भविष्यवाणी कराना चाहते हैं। यही कहा जायगा कि जैसा नमूना हम बनायेंगे, वैसा सामने आयेगा। अगर हिन्दुस्तान गलत रास्ते को पसन्द करता है, तो दूसरे राष्ट्रों को सताकर उसका औद्योगीकरण हो सकता है। अगर वह सर्वोदय का रास्ता, याने सबके भले का रास्ता पसन्द करता है, तो वह विश्वशान्ति के लिए एक ताकत बनेगा। औद्योगीकरण करने से हम शांति मे बाधा डालते हैं। लेकिन आप पचास साल की फिक्र क्यों करते हैं? हमें तो ऐसा समाज बनाने की कोशिश करनी चाहिए, जिसमें सबका भला हो। ऐसे समाज के

दूसरी कौमों के अन्दर डर नहीं पैदा होगा। और न वह किसीका शोषण करेगा, न किसीको नोचेगा।

हमारे मित्र बीच मे ही बोल पड़े—मैं तो आपके अनुभव के आधार पर आगे की बात जानना चाहता हूँ।

बाबा ने जवाब दिया, मैं क्या जानूँ कि आगे क्या होगा? यह सब उस दिव्यशक्ति का प्रदर्शनमात्र है। सब उसीका जलवा है। मैं तो ईश्वर के हाथ में केवल एक औजार हूँ। और मुझे हर चीज के लिए तैयार रहना चाहिए।

यह कहकर बाबा पलभर के लिए ठहरे और फिर पूछा कि यह तो बताइये कि मुझे पचास साल देनेवाला कौन है?

उस भाई के पास इसका कोई जवाब नहीं था। बाबा ने कहा कि अगर पचास वर्ष तक शान्ति रहती है, तो इसके मानी यह हैं कि दुनिया सही दिशा मे जा रही है। अगर शान्ति से आपका मतलब सचमुच शान्ति से है और आजकल की जैसी 'ठडी लड़ाई' से नहीं, तो उसके मानी यह होंगे कि हिन्दुस्तान और दूसरे देश सही राह पर चल रहे हैं। जहाँ तक चीजों को मैं महसूस कर सकता हूँ, मैं यही कहूँगा कि हिन्दुस्तान में गरीबों को चूसे और नोचे बिना बड़े-बड़े कल कारखाने नहीं चल सकते।

उस मित्र ने पूछा, क्या जनता की सलाह इसमे ली जायगी या दिल्ली, बम्बई अथवा कलकत्ते में ही फैसले कर लिये जायँगे?

बाबा ने कहा कि हिन्दुस्तान तो देहातों मे रहता है। दिल्ली और बम्बई उसकी नुमाइन्दगी नहीं कर सकते। मेरा खयाल है कि यहाँ के लोगों की रुझान औद्योगीकरण की तरफ नहीं होगी। ३६ करोड़ की आबादीवाले देश का अगर आधुनिक ढग पर औद्योगीकरण किया जाय, तो दुनियाभर को उससे खतरा है। हिन्दुस्तान का फायदा तो विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था से ही हो सकता है। हर गाँव को खाना, कपड़ा और मकान जैसी बुनियादी जरूरतों

में अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए। हर गाँव मे खेती की मदद देनेवाले धन्धे भी चलने ही चाहिए।

इसके बाद दूसरा सवाल पूछा कि भूदान की सफलता या असफलता का क्या नतीजा होगा?

अगर यह असफल भी रहा, तो गरीबों को इससे कुछ न कुछ राहत तो मिल ही जायगी—बाबा बोले। इसलिए इसकी पूरी असफलता का सवाल उठता ही नहीं। अगर यह सफल होता है, तो ग्रामराज्य कायम होगा और सारे समाज का ऊपर से नीचे तक कुल ढाँचा ही बदल जायगा।

अगला सवाल यह था कि एक सदी से दूसरी सदी में क्या इन्सान भगवान् के ज्यादा नजदीक आता रहता है, या एक सदी में उतने ही सत्पुरुष होते हैं, जितने कि दूसरी मे?

बाबा ने कुछ सफाई चाही। उन्होंने कहा कि क्या आपके पूछने की यह मन्शा है कि इन्सान ईश्वर की तरफ बढ रहा है या पिछड़ रहा है या अपनी जगह पर कायम है?

जी हाँ।

जैसे-जैसे विज्ञान बढता जाता है, इन्सान के सामने यह सवाल पेश होता जाता है कि या तो वह हिंसा को ग्रहण करे और अपने को खतम कर ले, या फिर अहिंसा का रास्ता पकड़े। विज्ञान के कारण लोगों में समझ आयेगी और समझदार और ज्ञानवान् आदमियों से यही आशा की जाती है कि वे ईश्वर की तरफ बढें।

इस पर तो हमारे भाई चकित-से रह गये। उन्होंने कहा कि अगर इन्सान ईश्वर की तरफ जा रहा है, तो इतनी आफतें और सकट क्यों आते हैं?

मै समझता हूँ कि यह सब ईश्वर का चमत्कार है। आज हर राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से डरता है। युद्ध के औजारों में जैसे-जैसे प्रगति होती जाती है,

वैसे-वैसे इन्सान को यह सोचना पड़ रहा है कि या तो लड़ाइयाँ हमेशा के लिए बन्द कर दे या फिर अपने को ही मिटा दे। यह हिंसा की आखिरी सीढ़ी है, जिसके बाद अहिंसा ही आनेवाली है।

यह सुनकर तो उन्हें और अचम्भा हुआ—क्या अहिंसा हिंसा से ही पैदा होती है?

बाबा जोर से हँसे और बोले—नहीं, अनुभव से पैदा होती है। ईश्वर अक्ल सिखा रहा है। कोई अनुभव बेकार नहीं जाता। मुझे पूरा विश्वास है कि दुनिया तेजी से अहिंसा की ओर बढ़ रही है।

बाबा का आत्म-विश्वास देखकर यह भाई दंग रह गये और कहने लगे कि क्या त्याग और कष्ट सहने से इन्सान के अन्दर उदारता, दया, प्रेम आदि लाजिमी तौर पर पैदा होते ही हैं?

बाबा ने जवाब दिया कि जरूर। घर में तो ऐसा ही होता है। माँ बाप का नित्य का व्यवहार इसे अच्छी तरह सिद्ध करता है। बाहर की दुनिया में भी आप देखते हैं कि जब सूरज आसमान में शिखर तक पहुँच जाता है, तब नीचे उतरना शुरू करता है। इसी तरह जब आप देखते हैं कि अब कुल समाज के खतम होने की नौबत आ गयी है, तब कोई दूसरा रास्ता नहीं रह जाता। लेकिन इन्सान को जिन्दा रहना है। इसलिए और चीजें भी बदली हैं। थोड़े दिन की बात है कि एक अमेरिकन मित्र ने मुझसे सन्देश माँगा। मैंने कहा कि मुझे न इसकी आदत है और न मैं इसके लायक ही हूँ। लेकिन मैंने उनके सामने यह सुझाव रखा कि अमेरिका 'बड़े दिन' के रोज अगर अपने सारे जहाजी बेड़े को डुबा दे, तो अच्छा होगा। जहाज बनाते जाइये और डुबाते जाइये। इससे रोजगारी भी बनी रहेगी और दुनिया में शान्ति कायम होगी। मैं आपसे कहना चाहता हूँ कि यह किसी-न-किसी दिन होने ही वाला है। लोग उठ खड़े होंगे और कहेंगे कि हम तलवारों को खेती के हल में बदल देंगे। इसमें कोई शक की गुंजाइश नहीं है।

अब तो उस भाई का रोम-रोम खिल उठा। वे बोले, लोग लड़ाई चाहते नहीं हैं, फिर भी लड़ाइयाँ होती हैं। अगर राय ली जाय, तो ज्यादातर खिलाफ में ही राय देंगे। इसलिए मुझे लगता है कि लड़ाई रोकने की योग्यता ही लोगों में नहीं है।

बाबा ने उनका डर दूर करते हुए कहा कि इसमें योग्यता या अयोग्यता का सवाल नहीं उठता। ईश्वर की मर्जी अपने ढंग से काम कर रही है और इन्सान को अहिंसा की तरफ ले जा रही है। विज्ञान जल्दी ही इस अवस्था को ला देगा। फिर, इन्सान को जिंदा भी तो रहना है।

क्या यह आपकी श्रद्धामात्र नहीं है?

बाबा ने हँसते हुए कहा कि हाँ, यह तर्क जरूरी नहीं है। लेकिन यह तो आप देख ही सकते हैं कि मौजूदा हालतों को भी बर्दाश्त नहीं किया जा सकता। ज्ञानवान् आदमी एक दुनिया की बात सोच रहे हैं। पुराने जमाने में इन्सान इन्सान के प्रति हिंसक होता था। आज राष्ट्रों के ऊपर हिंसा उतनी हावी नहीं है, जितना कि डर। अगर एक भी राष्ट्र आगे बढ़ने की हिम्मत करे और अपने सारे काम शान्ति से चलाये, तो यह डर चला जायगा। इससे दूसरों को भी रोशनी और बल मिलेगा।

बाबा की अटूट श्रद्धा देखकर उस भाई के ऊपर बहुत असर पड़ा। कुछ देर सोचकर उन्होंने पूछा कि आपके खयाल में मनुष्य के जीवन में उसकी प्रगति में बड़ी-से-बड़ी बाधा डालनेवाली चीज क्या है?

यह सवाल सुनकर बाबा को बड़ी खुशी हुई। वे कहने लगे कि किसी व्यक्ति को दूसरे व्यक्तियों से अपने को अलग नहीं समझना चाहिए। सबसे बड़ी बाधा यही है कि हम यह मान बैठे हैं कि यह देह या शरीर ही हम हैं। लेकिन असलियत यह है कि हम और हमारा शरीर दो अलग-अलग चीजें हैं। इस जीवन में यह शरीर सेवा के लिए मिलता है। लेकिन हम समझते हैं कि यह शरीर ही हम हैं। इस तथ्य को महसूस करना चाहिए। जिस तरह मैं इस मकान में रहता हूँ, लेकिन मैं यह मकान

खुद नहीं हूँ, उसी तरह मैं इस शरीररूपी मकान मे रहता हूँ, लेकिन मैं यह शरीर नहीं हूँ और जिस तरह मै इस मकान को छोड़कर दूसरे मे रहने लगता हूँ, उसी तरह हमको यह शरीर छोड़ने के लिए तैयार रहना चाहिए।

इस पर हमारे मित्र को यह शंका हुई कि यह भान अपने-आप हरएक को क्यों नहीं होता ?

बाबा ने कहा कि अगर यह अनुभव हरएक को अपने-आप ही होने लगे, तो इसमें तारीफ की क्या बात रही ? तब तो यह जानवरों आदि सभी में होता। इसमें तारीफ तो तभी है, जब हमे इसके लिए कुछ करना होता है। आप देखिये, जन्म के समय हमें इसका कितना अनुभव होता है ? लेकिन बड़े होने पर कितना ज्यादा हो जाता है। फिर यह भी सोचने की बात है कि लड़ाई या दूसरे काम के लिए लोग अपने शरीर का बलिदान क्यों कर देते हैं ?

ऐसा तो बुरे काम के लिए भी किया जा सकता है।

लेकिन फिर भी इससे यह तो साबित हो ही जाता है कि मै इस शरीर से भिन्न हूँ, जिसका बलिदान किया जाता है।

तब आत्महत्या को क्यों बुरा कहते हैं ?

आत्महत्या में भी एक तीसरे व्यक्ति के नाते मुझे तो वह अनुभव हो ही जायगा, चाहे उस मूर्ख को न हो। आत्महत्या मूर्खतामात्र है।

इस पर हमारे मित्र ने कहा कि क्या ईसा भी कष्ट मे सूली पर नहीं चढे ?

बाबा ने तुरन्त कहा कि चढे तो, पर उस दिव्यात्मा के मुख से क्या शब्द निकले ? यही न कि हे ईश्वर, तेरी इच्छा पूरी हो।

हमारे भाई बोले कि ईसा में और दूसरों मे फ़र्क है।

बाबा ने इसे क़बूल करते हुए कहा कि ऐसा तो है ही। लेकिन इस

उदाहरण से पता चलता है कि इन्सान कुर्बानी कर सकता है। अतः आपको स्पष्ट हो जायगा कि सबसे बड़ी बाधा यही है कि मनुष्य अपने को शरीर से एकरूप मान लेता है।

संवाददाता बन्धु का अगला सवाल था—ईश्वर की तरफ बढ़ने के लिए संगठित धर्म एक मदद है, रुकावट है या अनावश्यक चीज है?

इस सम्बन्ध में तो बाबा के बहुत पक्के विचार हैं। उन्होंने कहा कि धर्मवालों ने यह समझकर इसका संगठन किया कि इससे मदद मिलेगी। लेकिन व्यक्तिगत तौर से मैं ऐसे संगठनों के खिलाफ हूँ। मेरा हमेशा से यही विचार रहा है कि संगठन एक प्रकार की हिंसा है। मेरी सलाह सदा यही रहती है कि संगठन की जरूरत नहीं है और आदमी को अपने काम में पूरी आजादी मिलनी चाहिए। पेनल कोड या तिजारती कानून के बजाय उन्होंने स्वर्ग और नरक बना रखे हैं। इन सबसे तो मुझे बेहद तकलीफ होती है। धर्म का संगठन मुझे जरा भी नहीं भाता। सच तो यह है कि संगठन और धर्म एक-दूसरे के विरोधी शब्द हैं। संगठन के ही कारण धर्म वह शक्ति नहीं बन सका, जो उसे बनना चाहिए था। यह जरूर है कि प्रगति धीमी रहती है। लेकिन हालत आज की अपेक्षा कहीं ज्यादा बेहतर होती।

इस गंभीर चर्चा के बाद एक भाई ने एक हल्का सा सवाल पूछा—क्या शहरों और मशीनों को छोड़े बिना आपके व्यक्तिगत जीवन के अनुसार कोई अमल कर सकता है?

अपने अनोखे विश्वास के साथ बाबा बोले, जरूर सम्भव है। अगर शहरवाले थोड़ा विवेक से काम लें, तो वे सादा जीवन सहज ही बिता सकते हैं। इसकी क्या जरूरत है कि वे ढेर सारे कपड़े हमेशा लपेटे रहें? खुली हवा का इस्तेमाल वे कर सकते हैं। फिर क्या यह जरूरी है कि वे हमेशा मोटर या सवारी में ही बैठें। उन्होंने पैदल चलना बन्द क्यों कर दिया?

उस मित्र ने कहा कि आपका तो एक व्यवस्थित ढग चलता है। आपको न कोई मोह है, न लालसा। एक शहरी होने के नाते हमें कुछ विरोधी काम भी करने होते है।

तो अब सवाल यह है कि बिना मोह-माया छोड़े सादा जीवन बिताया जा सकता है?

जी हाँ, उस भाई ने दबी आवाज मे कहा।

तब मैं यह कहना चाहूँगा कि गलत मोह छोड़ दो, और सही रखो। विवेक से काम लो।

यही तो मुसीबत है। यह कैसे किया जाय? क्या शहर मे धोती पहनी जा सकती है?

क्यों नहीं? कम से कम आप अपने कपड़े खुद तो साफ कर सकते हैं? आपको कौन रोकता है?—बाबा ने पूछा।

कपड़े क्यों साफ करें? कोई दूसरा काम क्यों न करें?

मैं तो पूछना चाहूँगा कि क्या आप शहर मे प्रार्थना कर सकते हैं?

मेरे खयाल मे कर तो सकते हैं।

तब कपड़े धोने जैसा मामूली काम क्यों नहीं कर सकते? प्रार्थना करने के मुकाबले यह ज्यादा कठिन नहीं है। सिनेमा क्यों जाया करते हैं?

हालत की मजबूरी भी कुछ कराती है—धीमी आवाज से वह भाई बोले।

यह हो सकता है। तब आपको बीच का रास्ता लेना होगा।

क्या आपको बीच के रास्ते मे विश्वास है?

बाबा ने मुसकराकर कहा—अब आप इस रास्ते से उस रास्ते पर जाते हैं, तो बीच मे रास्ता होता ही है। यह सुनकर हम सब हँस पड़े। बाबा बोले, अन्त में आपको शहर छोड़ना होगा और पलभर की खामोशी के

बाद कहा कि अच्छा, एक बात बताइये। आप शहर में कम से-कम अपने पड़ोसी से प्यार कर सकते हैं या नहीं?

हमारे मित्र मानो फँस गये। उन्होंने जवाब दिया, हाँ, ऐसा हो सकता है। लेकिन यह हमारे लिए चुनौती ही समझी जाय।

एक दूसरे पत्रकार भाई ने पूछा कि आपके खयाल मे आज भारत के अन्दर महात्मा गाधी का प्रभाव कितना है?

बाबा ने कहा कि महापुरुषों का परिणाम बहुत दूर काल में होता है। बुद्ध भगवान् का परिणाम आज ढाई हजार साल बाद दुनिया को हो रहा है। सत्पुरुषों का परिणाम अत्यन्त दूर तक और व्यापक हुआ करता है। केवल दस-पाँच साल के फासले से उसका नाप नहीं किया जा सकता। फिर भी हमको बहुत आशा पैदा होती है यह देखकर कि भारत में महात्मा गाधी का परिणाम रोज-रोज बढ़ रहा है। उसके चार लक्षण हम देख रहे हैं।

बाबा बोले कि एक तो यह कि भूदान-यज्ञ का विचार निकला और लोगों को जँचा। हम समझते हैं कि महात्मा गाधी के विचार का प्रभाव लोगों पर है, उसका यह लक्षण है। दूसरा लक्षण हम यह देखते हैं कि हिन्दुस्तान के कारण सारी दुनिया में कुछ प्रेमभाव बढ रहा है। स्पष्ट शब्दों में कहें, तो यह कहना होगा कि द्वेषभाव कम हो रहा है। भारत का अपना जो भी वजन है, उसे उसने शान्ति के पक्ष में और दुनिया की आजादी के पक्ष में डाला है और किसी भी हिंसक पक्ष में भारत दाखिल होता नहीं। कोई दूसरी भौतिक प्राप्ति उन्हें नहीं होनेवाली थी। हम समझते हैं कि यह महात्मा गाधी का प्रभाव है।............तीसरी बात हम यह देख रहे हैं कि धीरे-धीरे भारत सरकार को ग्रामोद्योग का महत्त्व जँचने लगा है। इसको हम इनकार नहीं कर सकते कि महात्मा गाधी के प्रभाव के साथ साथ हमारे इन भाइयों पर, जो सरकार में हैं, पश्चिमी देशों का भी असर है। इस वास्ते महात्मा गाधी के जो ग्रामोद्योग आदि के विचार हैं, उनके साथ पूरी तरह सरकार के लोग कभी सहमत नहीं हुए।

'परन्तु हिन्दुस्तान की परिस्थिति का ही ऐसा दबाव है और सर्वोदय का विचार कुछ धीरे-धीरे लोगों मे फैल रहा है। इसके परिणामस्वरूप सरकार पर असर हो रहा है और वह ग्रामोद्योग को अपनाने जा रही है। हम कबूल करते हैं कि यह महात्मा गाधी के शुद्ध प्रभाव का लक्षण नहीं कहा जायगा, क्योंकि इसमें परिस्थिति का दबाव है। लेकिन गाधीजी के विचार ही ऐसे हैं, जो हिन्दुस्तान की परिस्थिति से पैदा हुए हैं और हिन्दुस्तान की परिस्थिति के बहुत अनुकूल हैं। इसका यह मतलब नहीं कि दुनिया की परिस्थिति मे यह विचार त्याज्य होंगे। महात्मा गाधी ने सर्वोदय का जो अर्थशास्त्र बताया, वह सारी दुनिया को लागू होगा और उससे सारी दुनिया का कल्याण होगा। परन्तु भारत के लिए वह अत्यन्त अपरिहार्य है। उसके बिना यहाँ के गरीबों को दो जून भोजन भी नहीं मिल सकता। इस वास्ते दूसरी पंचवर्षीय योजना मे ग्रामोद्योग की जो बात आयी, तो हम समझते हैं कि धीरे-धीरे महात्मा गाधी के विचारों का प्रभाव पड़ रहा है।

लेकिन गाधी के प्रभाव का सबसे बड़ा लक्षण हम एक दूसरी बात में देख रहे हैं। वह यह कि और किसी तरह का प्रलोभन न होते हुए भी आज हजारो कार्यकर्ता मनसा, वाचा, कर्मणा भूदान-यज्ञ में लगे हुए हैं। हम देख रहे हैं कि जितने त्यागी कार्यकर्ता इस आन्दोलन को मिले हैं, उतने मिलने की आशा हम नहीं कर सकते थे। कोरापुट जिले मे हमें खूब ग्रामदान मिले। इसका मुख्य कारण यही है कि बारिश के चार महीनों मे जगलों के अन्दर कार्यकर्ता भाई और बहनें सतत घूमते ही रहे और भूदान का कार्य करते रहे। बीच-बीच में मलेरिया से बीमार पड़ते थे, लेकिन जग अच्छे हुए कि इसी काम मे लग गये। यह एक अनोखा दृश्य था। सिवा इसके कि एक धर्मकार्य मे लगे है, उसका आनन्द प्राप्त हो रहा है, कोई दूसरा प्रलोभन उनके सामने नहीं है। और आखिर गाधी गये, तो क्या साथ लेकर गये?······राम हे राम!···

हम तो इसे रामजी का प्रभाव मानते हैं। लेकिन यदि हमसे पूछा गया, तो जरूर कह सकते हैं कि यह महात्मा गांधी का परिणाम है।

कोरापुट का नाम तो इन भाइयों ने सुना था। वहाँ जो नव-निर्माण का काम हो रहा है, उसकी भी कुछ जानकारी उन्हें दी। लेकिन उन्हें डर था कि यह पद्धति सरकारी पद्धति से भिन्न है, इसलिए इसके काम करनेवालों की सरकार से टक्कर आ सकती है। जब बाबा ने कोरापुट का नाम लिया, तो एक भाई ने अपनी शंका बाबा के सामने रखी। अगर विकेन्द्रीकरण का, जो आपका आदर्श है, उसके अनुसार बड़े पैमाने पर काम चले, तो सरकार से आपका झगड़ा आयेगा कि नहीं!

बाबा ने मुसकराते हुए जवाब दिया कि झगड़ा आ भी सकता है और नहीं भी आ सकता है। अगर नहीं आया, तो प्रेम का परिणाम होगा। मान लीजिये, सरकार की योजना गलत निकली और उसके साथ हमारा मेल नहीं मिला और हमको गाँव-गाँव जाकर यह समझाने का मौका आया कि सरकार की बात गलत है, तो उस हालत में जरूर झगड़ा आ सकता है। पर हमारा झगड़ा प्रेम का झगड़ा होगा। हम सरकार का परिवर्तन करना चाहते हैं। हम समझते हैं कि अगर ग्रामदान की दिशा में भूदान बढ़ता है, तो सरकार को जल्दी-से-जल्दी बदल सकेंगे और प्रेम से झगड़ा हल हो सकेगा। पर मान लीजिये, यह नहीं हुआ और झगड़े का मौका आया, तो हमें झगड़े का डर नहीं है, क्योंकि हमारा तरीका प्रेम का है।

लेकिन अगर सरकार का हमारे साथ झगड़ा न भी हो, तो भी ज्यादा झगड़ा सरकार से जरूर है। वह यह कि इस तरह की केन्द्रित सरकार हम नहीं चाहते। लेकिन यह तो जनता में वैसी इच्छा-शक्ति पैदा करने की बात है। इच्छा-शक्ति अगर हम तैयार करते हैं, तो आखिर लोकमत है, उसे कौन टाल सकता है! इसके अलावा, हमारा झगड़ा सभी सरकारों के साथ है, तो इस सरकार के साथ भी है।

इसका मतलब यह हुआ कि भूदान सारी दुनिया पर लागू होने की

चीज़ है। हमारे एक विदेशी मित्र को लगा कि उनके देश मे भूदान कैसे चलेगा? इसलिए उन्होंने पूछा कि पश्चिम के ज्यादातर देशों मे तो बड़े-बड़े जमींदारों और भूमिहीनों का सवाल इस तरह नहीं है, जिस तरह कि हिन्दुस्तान मे है। उन देशों में सामाजिक स्थिति भी काफी अच्छी है। लेकिन वहाँ शहरों और देहातों का अन्धाधुन्ध यन्त्रीकरण हो रहा है, यहाँ तक कि हमारे रहन-सहन और विचार करने के ढग मे भी जड़ता आ रही है। आपकी राय में इन समस्याओं का हल कैसे हो सकता है?

बाबा ने जवाब दिया कि हम कहना चाहते हैं कि यह चीज भी भूदान के साथ जुड़ी हुई है। हमने बहुत दफा कहा है कि भूदान में जमीन का वितरण एक अग है और दूसरा है ग्रामोद्योग—याने गाँव के लोग उद्योग के आधार पर अपना जीवन चलायें। इसके यह माने नहीं होते कि पुराने औजार ही इस्तेमाल किये जायँ। परन्तु समाज की परिस्थिति के अनुसार जो औजार प्राप्त हो सकते हैं और उनमे जो सशोधन हो सकता है, वह करके गॉव के लोग अपना जीवन सादगी से अच्छी तरह चलायें। जहाँ तक सादगी की बात करते हैं, तो कुछ लोग समझते हैं कि यह ऐश्वर्य नहीं चाहता या जीवन को सब तरह सम्पन्न करना नहीं चाहता।

हमने अखबार में पढा कि सरदार पणिक्कर ने कहा कि सारा जीवन व्यक्ति की उन्नति के लिए हो, यह गलत ध्येय है। तो हम जाहिर करना चाहते हैं कि हम सब प्रकार की अभिवृद्धि चाहते हैं। लेकिन हम यह भी चाहते हैं कि हर मनुष्य का सृष्टि के साथ सम्बन्ध बना रहे, कोई मनुष्य दूसरे का शोषण न करे और समाज के अन्दर विषमता न हो। फिर खूब समृद्धि हो। इस तरह हम समृद्धि तो चाहते है, पर उसके साथ-साथ ये तीन बातें जोड़ देना जरूरी है। इस प्रकार शोषणरहितता, सम्यक् विभाजन और सृष्टि के साथ जीवित सम्बन्ध—इन तीन बातों को ध्यान में रखकर हम गाँवों को स्वावलम्बी बनाना चाहते हैं और सादगी चाहते हैं।

हमारे शास्त्रों ने, जो अत्यन्त सादा जीवन सिखाते हैं, यह आजादी दी है

हम तो इसे रामजी का प्रभाव मानते हैं। लेकिन यदि हमसे पूछा गया, तो जरूर कह सकते हैं कि यह महात्मा गांधी का परिणाम है।

कोरापुट का नाम तो इन भाइयों ने सुना था। वहाँ जो नव निर्माण का काम हो रहा है, उसकी भी कुछ जानकारी उन्हें दी। लेकिन उन्हें डर था कि यह पद्धति सरकारी पद्धति से भिन्न है, इसलिए इसके काम करने-वालों की सरकार से टक्कर आ सकती है। जब बाबा ने कोरापुट का नाम लिया, तो एक भाई ने अपनी शंका बाबा के सामने रखी। अगर विकेन्द्रीकरण का, जो आपका आदर्श है, उसके अनुसार बड़े पैमाने पर काम चले, तो सरकार से आपका झगड़ा आयेगा कि नहीं?

बाबा ने मुसकराते हुए जवाब दिया कि झगड़ा आ भी सकता है और नहीं भी आ सकता है। अगर नहीं आया, तो प्रेम का परिणाम होगा। मान लीजिये, सरकार की योजना गलत निकली और उसके साथ हमारा मेल नहीं मिला और हमको गाँव-गाँव जाकर यह समझाने का मौका आया कि सरकार की बात गलत है, तो उस हालत में जरूर झगड़ा आ सकता है। पर हमारा झगड़ा प्रेम का झगड़ा होगा। हम सरकार का परिवर्तन करना चाहते हैं। हम समझते हैं कि अगर ग्रामदान की दिशा में भूदान बढ़ता है, तो सरकार को जल्दी-से-जल्दी बदल सकेंगे और प्रेम से झगड़ा हल हो सकेगा। पर मान लीजिये, यह नहीं हुआ और झगड़े का मौका आया, तो हमें झगड़े का डर नहीं है, क्योंकि हमारा तरीका प्रेम का है।

लेकिन अगर सरकार का हमारे साथ झगड़ा न भी हो, तो भी ज्यादा झगड़ा सरकार से जरूर है। वह यह कि इस तरह की केन्द्रित सरकार हम नहीं चाहते। लेकिन यह तो जनता में वैसी इच्छा-शक्ति पैदा करने की बात है। इच्छा-शक्ति अगर हम तैयार करते हैं, तो आखिर लोकमत है, उसे कौन टाल सकता है! इसके अलावा, हमारा झगड़ा सभी सरकारों के साथ है, तो इस सरकार के साथ भी है।

इसका मतलब यह हुआ कि भूदान सारी दुनिया पर लागू होने की

चीज है। हमारे एक विदेशी मित्र को लगा कि उनके देश मे भूदान कैसे चलेगा ? इसलिए उन्होंने पूछा कि पश्चिम के ज्यादातर देशों मे तो बड़े-बड़े जमींदारों और भूमिहीनों का सवाल इस तरह नहीं है, जिस तरह कि हिन्दुस्तान मे है। उन देशों मे सामाजिक स्थिति भी काफी अच्छी है। लेकिन वहाँ शहरों और देहातों का अन्धाधुन्ध यन्त्रीकरण हो रहा है, यहाँ तक कि हमारे रहन-सहन और विचार करने के ढग मे भी जड़ता आ रही है। आपकी राय मे इन समस्याओं का हल कैसे हो सकता है ?

बाबा ने जवाब दिया कि हम कहना चाहते हैं कि यह चीज भी भूदान के साथ जुड़ी हुई है। हमने बहुत दफा कहा है कि भूदान मे जमीन का वितरण एक अग है और दूसरा है ग्रामोद्योग—याने गाँव के लोग उद्योग के आधार पर अपना जीवन चलायें। इसके यह माने नहीं होते कि पुराने औजार ही इस्तेमाल किये जायँ। परन्तु समाज की परिस्थिति के अनुसार जो औजार प्राप्त हो सकते हैं और उनमें जो सशोधन हो सकता है, वह करके गाँव के लोग अपना जीवन सादगी से अच्छी तरह चलायें। जहाँ तक सादगी की बात करते हैं, तो कुछ लोग समझते हैं कि यह ऐश्वर्य नहीं चाहता या जीवन को सब तरह सम्पन्न करना नहीं चाहता।

हमने अखबार मे पढा कि सरदार पणिक्कर ने कहा कि सारा जीवन व्यक्ति की उन्नति के लिए हो, यह गलत ध्येय है। तो हम जाहिर करना चाहते हैं कि हम सब प्रकार की अभिवृद्धि चाहते हैं। लेकिन हम यह भी चाहते हैं कि हर मनुष्य का सृष्टि के साथ सम्बन्ध बना रहे, कोई मनुष्य दूसरे का शोषण न करे और समाज के अन्दर विषमता न हो। फिर खूब समृद्धि हो। इस तरह हम समृद्धि तो चाहते है, पर उसके साथ-साथ ये तीन बातें जोड़ देना जरूरी है। इस प्रकार शोषणरहितता, सम्यक् विभाजन और सृष्टि के साथ जीवित सम्बन्ध—इन तीन बातों को ध्यान मे रखकर हम गाँवों को स्वावलम्बी बनाना चाहते है और सादगी चाहते हैं।

हमारे शास्त्रों ने, जो अत्यन्त सादा जीवन सिखाते है, यह आजादी दी है

कि अन्न खूब बढाना चाहिए, उत्पादन खूब बढाना चाहिए। जिस प्रकार का चाहे जीवन बिता लिया और उसे सादा जीवन कहने लगे, यह गलत बात होगी। हमने जो तीन बातें कहीं, उनको कायम रखकर जितना ऐश्वर्य हम बढा सकते हैं, उतना जरूर बढ़ायें। इस प्रकार का जीवन गाँव में बने, यह भूदान-आन्दोलन का एक अंग है। और हम मानते हैं कि दुनिया के सब देशों में बहुत बड़ा काम करने का है। खासकर यूरोप अमेरिका के देशों मे तो जरूर करने का है।

यह सुनकर तो हमारे मित्र को बहुत आशा बँधी। पिछली लड़ाई में वह जापानी कॅम्प मे कई मास बन्द रहे और वही कॅम्प बहुतों की कब्र भी बन गया था। इन जानेवालों में उनके पिता भी थे। इसलिए बाबा की बात से उनको बहुत दिलचस्पी पैदा हुई और पूछा कि दुनिया में जो कशमकश दीखती है, वह किस प्रकार कम होगी?

बाबा ने कहा कि इसके दो उपाय हैं। एक तो यह कि सब राष्ट्रों के प्रतिनिधि मिलकर इसे कर सकते हैं, दूसरा यह कि एक-एक राष्ट्र के अन्दर कर सकते हैं। सब राष्ट्रों को मिलाकर U. N O बना है। खुशी की बात है कि इसमें अभी कोई सोलह राष्ट्र और दाखिल किये गये है। लेकिन चीन जैसे बड़े देश को स्थान नहीं दिया गया। हम समझते हैं कि यह हठ है। यह तो नाहक का डर है। जब चीन में क्रान्ति हुई थी, तो बिलकुल आरम्भ में ही मैंने जाहिर किया था कि चीन को U. N. O. में जरूर दाखिल करना चाहिए। तब तक हिन्दुस्तान की सरकार ने भी चीन को मान्यता नहीं दी थी। हमारी राय में चीन को वहाँ स्थान देने में जितनी देर हो रही है, उतना ही विश्वशान्ति के लिए खतरा है।

विश्वास के बिना विश्वशान्ति नहीं हो सकती। एक-दूसरे की बातों पर विश्वास रखना चाहिए। U N O. में बैठते तो हैं, पर आमने सामने बैठकर अविश्वास रखेंगे तो कैसे चलेगा? जब रूस ने कहा कि हम अपने शस्त्रास्त्र जाहिर करने को राजी हैं और जो अपने पास अणुशस्त्र हैं, उन्हें

छोड़ने को राजी हैं, तो उस पर विश्वास करना चाहिए और दोनों को मिलकर वह काम पूरा करना चाहिए। यही सुझाव, हमको कहने में खुशी है कि पोप ने भी जाहिर किया।

तो, यह तो देशों के प्रतिनिधियों को मिलकर करने का काम है। लेकिन देश के अन्दर करने का भी काम है। वह यह कि हर देश में कुछ समस्याएँ होती हैं। ये समस्याएँ जनशक्ति से—सरकारी व्यक्ति से नहीं—हल हो सकती हैं, यह दिखाना चाहिए। सरकारी शक्ति और जनशक्ति में जो मैं फर्क करता हूँ, वह महत्त्व का है। आपने सरकार को चुना। तो सरकार जो करती है, वह आप ही करते हैं, ऐसा कहा जायगा। फिर भी मैं उसे जनशक्ति नहीं कहता। यहाँ पर नागार्जुन में एक बड़ा सुन्दर काम किया गया है। आप लोगों की सरकार ने किया। आप लोगों की आज्ञा पर जो लोग गये हैं, उन्होंने किया। तो यह आपका ही किया हुआ है एक तरह से। फिर भी हम उसे जनशक्ति नहीं कहते। लेकिन अगर आप मिल-जुलकर गाँव-गाँव में कुएँ खोदें, तो वह जनशक्ति का काम होगा। फिर उस काम में सरकार भी कुछ मदद करे, तब भी वह जनशक्ति का काम माना जायगा।

इस तरीके से सरकारी शक्ति से भिन्न जो जनशक्ति है, उस शक्ति से उस-उस देश के मसले हल हो सकते हैं, यह सिद्ध करना चाहिए। इस प्रकार देश-देश के प्रतिनिधियों के जरिये करने का काम और हर देश के अन्दर जनशक्ति से करने का काम—ये दो बातें जब होंगी, जब दुनिया में कशमकश कम होगी और शांति कायम होगी।

हमारे बन्धु बड़े चाव से यह सब सुन रहे थे, लेकिन उन्हें कुछ अचरज हो रहा था कि विनोबा विश्वशान्ति की चर्चा कर रहे हैं। मगर अहिंसा शब्द का नाम भी नहीं लिया। इसलिए हमारे मित्र ने एक व्यावहारिक सवाल सामने रखा। वह यह कि क्या आपके खयाल में यह

सम्भव है कि हिन्दुस्तान के निकट पश्चिम में इसराइल और अरब देशों के बीच जो झगड़ा है, वह अहिंसा से सुलझा लिया जायगा ?

बाबा ने बताया कि अहिंसा से जरूर हल हो सकता है। इसमें किसीको शक करने का कारण नहीं है। खास करके अरब और यहूदी, दोनों बड़ी भारी संस्कृतियों के वारिस हैं। दोनों के पास एक-एक अच्छी धर्म-पुस्तक है। वे दोनों सभ्य और सुसंस्कृत समाज हैं। लेकिन हम तो जानते हैं और मानते हैं कि जंगली लोगों में भी अहिंसा का प्रभाव आता है। इतनी ही बात है कि इसराइल और अरब लोगों को दूसरे-तीसरे देशों के प्रभाव में नहीं आना चाहिए। होता यह है कि कहीं भी समस्या पैदा हुई दो राष्ट्रों के बीच, तो वे दोनों राष्ट्र भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के साथ जुड़ जाते हैं। हमने देखा अपनी आँख से कि पाकिस्तान देखते-देखते अमेरिका की छाया में आ गया। अब मान लीजिये, अगर भारत देश भी किसीकी छाया में आ जाय, तो भारत-पाकिस्तान के झगड़े घटेंगे नहीं, बढ़ेंगे ही। इसलिए हम पंडित नेहरू की बुद्धिमत्ता समझते हैं कि वे किसी दूसरे देश की छाया में नहीं आना चाहते। तो यह अरब और इसराइल के लोग भी दूसरे तीसरे देशों की छाया हटा दें और फिर काम शुरू करें, तो अहिंसा से मसला हल हो सकता है।

यह सुनकर हमारे मित्र सोचने लग गये। उन्हें लगा कि अहिंसा की जन्म-भूमि भारत इस जिम्मेदारी को क्यों न उठाये ? उन्होंने बाबा से कहा कि आज दुनिया की बड़ी-बड़ी ताकतों के बीच एक मध्यस्थ के रूप में भारत का असर बढ़ रहा है। और मेरा खयाल है कि भारत ही ऐसा देश है, जो इस मसले में पड़कर मध्यपूर्व को इस भयानक उत्पात से बचा सकता है। ऐसी हालत में क्या आप इस मसले में अपना वजन डालने को तैयार होंगे ?

बाबा मुसकराये और बोले कि भारत की भूमिका बहुत नम्र है। लेकिन अगर भारत इस प्रकार की भूमिका लेगा कि हम लोगों की समस्या हल

करनेवाले है, जहाँ भी झगड़े होंगे, सब मिटानेवाले हैं—ऐसी भूमिका अगर हिन्दुस्तान ने ली, तो हिन्दुस्तान का पतन होगा और दुनिया का भी भला नहीं होगा। भारत मे यद्यपि अहिंसा की वृत्ति है, तथापि भारत ने अहिंसा से अपनी पूरी-पूरी समस्याएँ हल कर ली हों, सो बात नहीं। इसलिए भारत की मर्यादा है और भारत का कर्तव्य है कि यहाँ की समस्याएँ अहिंसा से हल करने में वह अपनी शक्ति लगाये। बाहर के देश अगर भारत की सेवा माँगें, तो सेवा देने के लिए भारत प्रस्तुत रहे। इतना ही उसका कर्तव्य होता है। ऐसा अपना अधिकार अगर भारत बतलाये कि दुनिया के बीच मे हम ही ऐसे पैदा हुए हैं कि दुनिया के झगड़े हमारे हाथ में आने चाहिए और हम ही उसका हल करेंगे, तो एक भयानक समस्या पैदा होगी। वह एक अहंकार भी होगा और उससे दुनिया को बहुत हानि होगी। उससे दुनिया की रक्षा होने के बजाय दुनिया में भय पैदा होगा। जैसा कि हमने कहा कि भारत की सेवा अगर दूसरे लोग माँगें, तो भारत को जरूर तैयार रहना चाहिए। लेकिन दुनिया की सेवा केवल शान्ति के शब्द बोलने से नहीं होगी। अपने देश के अंदर की जो अशान्ति है, वह मिटानी होगी, तभी दुनिया की सेवा करने का मौका आयेगा।

एक महिला पत्रकार भी मौजूद थीं। उन्होंने एक सवाल पूछने की इजाजत चाही। बाबा ने कहा—शौक से पूछिये।

उस बहन का सवाल था कि आप अपने काम के लिए उत्तराधिकारी किसे चुनेंगे?

बाबा ने फौरन जवाब दिया कि मैं अपने को ही चुन सकता हूँ। जो कोई भी अपने-आपको भूदान-यज्ञ से एकरूप कर ले, वह मेरा उत्तराधिकारी बन सकता है। इसे किसीको नाम देने की जरूरत नहीं है। यह ईश्वरप्रेरित आन्दोलन है। इसे मैंने एक दिन उठाया है, लेकिन इसका प्रेरक ईश्वर सर्वदा, सर्वत्र विद्यमान है, जिससे वह चाहेगा, काम ले

सर्वोदय तथा भूदान-साहित्य

(विनोबा)

	रु० नये पैसे
गीता प्रवचन	१— ०
शिक्षण-विचार	१—५०
कार्यकर्ता-पाथेय	०—५०
त्रिवेणी	०—५०
साहित्यिकों से	०—५०
भूदान गंगा (५ खण्डों में) प्रत्येक	१—५०
ज्ञानदेव चिन्तनिका	०—७५
जनक्रांति की दिशा में	०—२५
भगवान् के दरबार में	०—१३
गाँव-गाँव में स्वराज्य	०—१३
सर्वोदय के आधार	०—२५
एक बनो और नेक बनो	०—१३
गाँव के लिए आरोग्य-योजना	०—१३
व्यापारियों का आवाहन	०—१३
हिंसा का मुकाबला	०—१६
चुनाव	०—१३
ग्रामदान	०—७५

(धीरेन्द्र मजूमदार)

शासनमुक्त समाज की ओर	०—५०
नयी तालीम	०—५०
ग्रामराज	०—२५

(श्रीकृष्णदास जाजू)

संपत्तिदान-यज्ञ	०—५०
व्यवहार-शुद्धि	०—३८

(दादा धर्माधिकारी)

सर्वोदय दर्शन	३— ०
मानवीय क्रान्ति	०—२५
साम्ययोग की राह पर	०—२५
क्रान्ति का अगला कदम	०—२५

(अन्य लेखक)

	रु० नये पैसे
नक्षत्रों की छाया में	१—५०
भूदान-गंगोत्री	२—५०
भूदान-आरोहण	०—५०
श्रम-दान	०—२५
भूदान-यज्ञ क्या और क्यों ?	१— ०
सफाई : विज्ञान और कला	०—७५
सुन्दरपुर की पाठशाला	०—७५
गोसेवा की विचारधारा	०—५०
विनोबा के साथ	१— ०
पावन-प्रसंग	०—५०
छात्रों के बीच	०—३१
सर्वोदय का इतिहास	०—१५
गाँव-आन्दोलन क्यों ?	२—५०
पावन प्रकाश (नाटक)	०—२५
जीवन-परिवर्तन (नाटक)	०—२५
आज का धर्म	०—५०
विनोबा-संवाद	०—३८
सर्वोदय-संयोजन	१— ०
गांधी : राजनैतिक अध्ययन	०—५०
सामाजिक क्रान्ति और भूदान	०—३१
गाँव का गोकुल	०—२५
ब्याज बट्टा	०—२५
भूदान-दीपिका	०—१३
पूर्व-बुनियादी	०—५०
राजनीति से लोकनीति की ओर	०—५०
सत्संग	०—५०
क्रांति की राह पर	१— ०
क्रांति की ओर	१— ०